

प्रकाशक

डॉ० ज्ञानप्रकाश जैन

५/६००, शुचि प्रकाशन;
कोटगेट, वीकानेर (राज०)

दूरभाष ३६५२ व ३४०४

◆ सवौविकार लेखकाथीन

प्रथम संस्करण, १९७८

मूल्य . पन्द्रह रुपये मात्र ।

मुद्रक—

शुचि प्रिराट्स

रानी बाजार, वीकानेर (राज०)



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://DSC.GG/DHARMA)

Made with
By
Avinash/Shashi
(creator of
hinduism
server)



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://DSC.GG/DHARMA)

Made with
By

Avinash/Shashi
[creator of
hinduism
server]

घरेलू चिकित्सा

(घरेलू नुसखों का संग्रह)

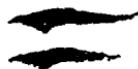
विषयानुक्रमणिका

	पृष्ठ संख्या
१. वीमारी किसे कहते हैं — —वीमारियों के प्रकार	१
२. चिकित्सा का प्रयोजन और उसके अग —	६
३. दवा बनाने और उनके इस्तेमाल करने के सम्बन्ध में खासतौर से जानने योग्य बातें —	६
४. बुखार — —प्रचलित विशिष्ट सक्रामक बुखार —आत्रिक ज्वर (टाइफाईड), श्वसनक ज्वर, (न्यूमोनिया), श्लेष्मक ज्वर (इन्फ्लुएंजा), ग्रंथिक ज्वर (प्लेग), कनफेड (मम्प्स), कमर तोड़ बुखार (डेंग्यून्ट्र) आमवातिक ज्वर (रियुमेटिक फीवर), रोहिणी (डिपथेरिया), गर्दन तोड़ बुखार (मेनिजाइटिस), खसरा, शीतला (स्माल पौक्स), छोटी माता, विषम ज्वर, काला अजार —	१३
५. पेट की वीमारियां — अग्निमाद्य और अजीर्ण, अरुचि, कै होना, दस्ते लगना, पेचिश ग्रहणी और सगणी, हैजा, शूल, अम्लपित्त, बायगोला, बवासीर, क्रिमिरोग, उदावर्त, आनाह, आधमान, जलोदर —	४४
६. छाती की वीमारियाँ — तपेदिक, खासी, काली खासी, दमा, हिचकी, हृदगरोग	६६

७	सारे गरीर की वीमारिया — रक्तपित्त, पाण्डुरोग, पीलिया, प्लीहा (तिळी) बढ़ना, यकृत (जिगर) बढ़ना, मोटापन, वातरोग, गठिया, मूजन, कुष्ठ रोग, सफेदकोढ़, पित्ती उछलना ।	७४
८	पेशाव की वीमारिया — पेशाव रुकना, पथरी, प्रमेह, वीर्यरोग ।	८०
९.	फोड़ा और धाव —	८५
१०	मानसिक वीमारिया — पागलपन, मृगी, हिस्टेरिया ।	८७
११.	बच्चो मे होने वाली वीमारियाँ —	१०२
१२.	स्त्रियो मे होने वाली वीमारियाँ —	१०४
१३.	मुँह, नाक, सिर, आंख और कान की वीमारियाँ —	१०७
१४	आकस्मिक दुर्घटनाएँ और उनका प्राथमिक उपचार —	११३



प्रस्तावना



मनुष्य के जीवन में यह आवश्यक नहीं होता कि वह अपनी हर बीमारी के लिए चिकित्सा कराने वैद्य या चिकित्सक के पास जाये। अपने विवेक से घर में ही वह अनेक छोटी-बड़ी बीमारियों की उचित चिकित्सा कर सकता है। भारतीय समाज के हर घर और परिवार में चिकित्सा सम्बंधी न्यूनाधिक ज्ञान पारम्परिक रूप से प्रचलित है। इसके लिए विशेष शिक्षा दीक्षा की भी आवश्यकता नहीं रहती। घर के बड़े बूढ़े लोगों पुरुष अपने अनुभवों के आधार पर बाद की पीढ़ी के लोगों को यह ज्ञान देते रहते हैं। नवीन शिक्षा, पाठ्यात्मक ज्ञान विज्ञान की चकाचौध और आर्थिक व सामाजिक उलझनों में व्यस्त आज का भारतवासी इस पारम्परिक ज्ञान से विमुख होता जा रहा है। साधारण सी बीमारियों की चिकित्सा के लिए उसे किसी चिकित्सक की शरण लेनी पड़ती है। इससे धन और समय की पर्याप्त हानि होती है। अत एक ऐसे योग संग्रह की आवश्यकता अनुभव हो रही थी जो ऐसे बीमार और जरूरतमद लोगों को अपने ही आप रोगों की पहिचान कर आसानी से उपलब्ध हो सकने वाली दवा जुटाने में मदद कर सके। यद्यपि इस ओर पूर्ण में भी कई पुस्तके लिखी जा चुकी हैं। परन्तु

इष पुस्तक को नवीनता और उपयोगिता का सही मूल्यांकन नों पाठक ही कर सकेग ।

प्रायः प्रचलित सभी रोगो के लिए हमारे ग्रामपाल गरलता से और सस्ते मे मिलने वाली औपचिया ही इसमें बनायी गयी है सभी प्रयोग सरल और अनुभव मिल रहे हैं । औपचिय की मात्रा लेने के तरीके और समय का भी यथास्थान निर्देश कर दिया गया है ।

इस ग्रंथ के प्रगायन की प्रेरणा राजा आयुर्वेद महाविद्यालय, उदयपुर के प्राचार्य आदरणीय श्रीमान वामुदेव जी शास्त्री से प्राप्त हुई थी अत लेखक उनका हृदय से कृतज्ञ है ।

पिछले तीन वर्षों से डा० श्री ज्ञानप्रकाश जी जैन इस प्रकार की पुस्तक लिखने का आग्रह करते रहे थे उन्ही के सत्प्रयत्नों से यह प्रकांशित भी हो रही है । अत उनका आभार व्यक्त करना मैं अपना पुनीत कर्तव्य समझता हूँ ।

पत्नी वैद्या श्रीमती सावित्रीदेवी ने इसकी पाण्डुलिपि तैयार करने मे सहयोग दिया है लेखक उनका साधुवोद करता है । अन्त में जिज्ञासु पाठको के सुझावो की कामना करते हुए

विद्वत्कृपाकाक्षी

राजोन्द्र प्रकाश भट्टनागर

अध्याय-१

बीमारी किसे कहते हैं ?



आयुर्वेद शास्त्र का प्रयोजन स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य (आरोग्य) को बनाये रखने के उपाय बताना और यदि व्यक्ति रोगी हो गया हो तो चिकित्सा कर उसे रोग से छुटकारा दिलाना है। इस प्रकार आयुर्वेद का लक्ष्य दीर्घ जीवन और आरोग्य प्रदान करना है।

यह जीवित शरीर तीन चीजों से मिलकर बना है—जड़ शरीर (जो पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश—इन पच भूतों से निर्मित है), मन और आत्मा से बना है। इन तीनों को जीवन के तीन ‘पाये’ (त्रिदण्ड) कहते हैं। अत जीवित शरीर तिपाये पर टिका हुआ है। इनमें से आत्मा ही परमात्मा का अव वायु है और उसमें किसी प्रकार की खराबी नहीं होती, वह विकार-रहित रहता है। शेष दो—शरीर और मन—हीं रोगों के ‘अधिष्ठान’ (आंश्य आधार) हैं। शरीर में होने वाले रोग ‘शारीरिक रोग’ और मन में होने वाले रोग ‘मानसिक रोग’, कहलाते हैं।

जिस किसी कारण और परिवर्तन से शरीर और मन में दुख होता है, उसे ‘रोग’ या **‘बीमारी’** कहते हैं।

आयुर्वेद शास्त्र में यह सैद्धान्तिक रूप से स्वीकार कर लिया गया है कि मनुष्य के शरीर में वात, पित्त और कफ नामक तीन दोष निश्चित परिमाण में होने हैं। जब तक इनका यह निश्चित परिमाण बना रहता है, तब तक मनुष्य निरोगी या स्वस्थ रहता है। इन दोषों को दोषों की ‘समावस्था’ कहते हैं। परन्तु, जब वाहरी और भीतरी कारणों से इनका निश्चित परिमाण विगड़ जाता है, अर्थात् जब दोष

बढ़ जाते हैं अथवा घट जाते हैं तो रोग या वीमारी हो जाती है। दोपो के घटने से उनके कार्य और गुण कम हो जाते हैं, अत याम नकलीफ मालूम नहीं होती, परन्तु जब दोप बढ़ जाते हैं तो शरीर और मन में अनेक बुरे लक्षण पैदा होते हैं, इस दशा को दोपो का 'कोप' कहते हैं और वास्तव में अधिकाश रोग दोपो के कोप के कारण ही होते हैं।

वीमारियों के प्रकार

वैसे वीमारिया अस्थय हैं और उनकी सही गिनती करना नभव नहीं है। प्राचीन वैद्यक—शास्त्रकारों ने इनको मोटे तीर पर चार भागों में बाटा है—

(१) **ख्याभाविक रोग**.—ममय(काल)स्वाभाविक गति से चलता रहता है। ममय की गति के कारण जो वीमारिया अपने आप पैदा होती है, उन्हें 'स्वाभाविक रोग' कहते हैं, जैसे भूम्, प्यास, बुढ़ापा, मृत्यु आदि।

(२) **आगन्तुज या आकस्मिक रोग** चोट लगने, पेड़ से गिरने, जल जाने, जन्तुओं द्वारा काट नेने आदि में होने वाली विमारिया 'आगन्तुज' या आकस्मिक कहलाती है।

(३) **मानसिक रोग** —किसी के प्रति लगाव रखना 'इच्छा' कहलाती है और किसी को नहीं चाहना 'द्वेष' कहलाता है। चाहीं गई चीज नहीं मिलने और ग्रनचाही चीज मिल जाने से मन में काम, क्रोध, लोभ, मोह, मात्सर्य, उन्माद, अपस्मार आदि रोग हो जाते हैं। इनको 'मानसिक रोग' कहते हैं।

(४) **शारीरिक रोग** —वात, पित्त और कफ नामक दोषों को गडबड़ी से होने वाले रोग गारीरिक रोग कहलाते हैं जैसे ज्वर (बुखार), अतिसार (दस्ते लगना), राजयक्षमा, पाइरोग आदि।

१. ये सब विमारिया अक्सर तीन प्रकार की होती हैं— इनमें से कुछ खानपान की अनियमितता के कारण होती है ये, 'द्रोष्यज' वीमारिया कहलाती है। दोपजो के ठीक हो जाने पर ठीक हो जाते हैं जैसे अजीर्ण आदि।

२. कुछ वीमारिया पहले के (इस जन्म में वर्तमान काल से

पहले किये हुए अथवा इस जन्म से पहले के जन्म में किये हुए) कर्मों के फल के परिणाम-स्वरूप पैदा होती है। इनको 'कर्मज' वीमारिया कहते हैं। कर्म का फल भोग लेने पर कर्मक्षीण हो जाता है, तब ये वीमारिया भी शान्त हो जाती है। कर्म का प्रायः चित्त करने से भी इनसे छुटकारा मिलता है। जैसे - कोढ़, प्रमेह आदि।

कुछ वीमारिया कर्म के फल और दोषों की गडवडी इन दोनों के समिश्रण से पैदा होती है। इनमें दोनों प्रकार की चिकित्सा वरती जाती है जैसे - कोढ़, सफेद कोढ़, आदि वीमारिया।

इन भेदों के अनावा कुछ ऐसी भी वीमारिया हैं जो मनुष्य योनि से भिन्न योनि वाले गरीर रहित जीवों, जिनको बोलचाल में 'भूत-प्रेत' या 'ग्रह' कहते हैं के शरीर और उसमें रहने वाले मन में प्रवेश करने से पैदा होती है। इनको 'भूत वाधा' (भूतजनित रोग) कहते हैं। इनसे शारीरिक विकारों के साथ अधिकतर मानसिक विकार पैदा होते हैं।

एक और रोगों का वर्ग शेष रह जाता है, जिनको 'आौपसर्गिक' या सक्रामक रोग कहते हैं। आधुनिक चिकित्सा विज्ञान 'एलोपेथी' में इन रोगों का बहुत विस्तार के साथ वर्णन किया गया है अक्सर यह कहते सुना जाता है कि आयुर्वेद जास्त्र में आौपसर्गिक रोगों को नहीं माना गया है और उनका विवेचन नहीं किया गया है। परन्तु यह कहना सर्वथा भूल है नीचे हम एक सन्दर्भ प्रस्तुत कर रहे हैं जिसमें यह बताया गया है कि किस-किस प्रकार से आौपसर्गिक (सक्रामक) रोग एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में फैलते हैं तथा कौन-कौन से प्रसिद्ध आौपसर्गिक रोग हैं।

प्रसगादगात्रसस्पशान्निश्वासात्सहभोजनात् ।

- सहशश्यासनाच्चापि वस्त्रमाल्यानुलेपनात् ।

कुष्ठ ज्वरश्च शोषाश्च नेत्राभिष्यन्द एवच ।

आौपसर्गिकरोगाश्च सक्रामन्ति नरान्तरम् ॥

(सुश्रुतसहिता, सूत्रस्थान-अध्याय-५, श्लोक ३३)

(१) आौपसर्गिक रोग से पीड़ित स्त्री और पुरुष के परस्पर मैथुन करने से (इससे कुष्ठ, उपदश और वेनेरल डिजिजेज फैलती है।)

(२) शरीर के छूने से (इसमें कुप्ठ, गीतना आदि रोग फैलते हैं ।)

(३) अवास के साथ निकली वायु के कारण (राजयद्मा, डिफ्टेरिया, कुकुरखासी आदि रोग ऐसे ही फैलते हैं, रोगी के नाक और मुँह से खासते, छोकते, बोलते और खरासते, समय निकते हुए थूक, और कफ की बूँदों से दूसरे लोगों में संक्रमण या उपसर्ग पहुचता है ।)

(४) साथ बैठकर शोजन करने से (इसमें मोतीझरा, दस्तें लगना, हैंजा आदि रोग, पानी और अन्न के दूषित होने में) ही फैलते हैं ।

(५) साथ में सोने से (कोढ़, गोतलता आदि रोग ऐसे ही) फैलते हैं ।

(६) रोगी के कपड़े, माला और रोगी को लगाये हुए चंदन आदि लेप को दूसरे व्यक्ति द्वारा काम में लेने पर (कुप्ठ, चेचक आदि रोग फैलते हैं ।)

इस सदर्भ में कुछ औपसर्गिक रोगों की गणना भी की गई है— जैसे कुप्ठ (चमड़ी के रोग, रक्त की खराबी से होने वाले रोग और गलित कोढ़-लेप्रोसी), ज्वर (अनेक प्रकार के बुखार छुत से ही फैलते हैं), शोष [राजयद्मा या तपेदिक की वीमारो], नेत्राभिष्यद [आखे आना, आँख की वीमारिया] ये औपसर्गिक वीमारियां जीवाणुओं से फैलती हैं । उनका भी आयुर्वेद में वर्णन है ।

इस प्रकार सभी प्रकार की औपसर्गिक वीमारियों का सक्षेप में निर्देश किया जा चुका है । फिर भी, आयुर्वेद शास्त्र में इनका विस्तार से क्यों नहीं विचार किया गया ? सभी रोगो—यहा तक कि ज्वर गिनाये गये, कोढ़, बुखार, शोष, अभिष्यद आदि का विचार भी, आयुर्वेद में वातपित और कफ के सिद्धात पर भी किया गया है । इसका एक मूलभूत कारण है । वह यह कि आयुर्वेद शास्त्र में शरोर के बल को बनाये रखने पर जोर दिया गया है । इसके लिए उपाय भी बताये गये हैं । जब तक शरीर का बल बना रहेगा, तो दोषों में भी विगड़ नहीं होगा और जीवाणु शरीर में पहुचने पर भी रोग नहीं पैदा कर सकते । हम जिस वातावरण में रहते हैं और जिस अन्नपान का सेवन करते हैं, वह जीवाणुओं से रहित नहीं है, फिर भी हममें से सभी लोग

वीमार नहीं होते, कुछ ही यक्षामक रोग से पीड़ित होते हैं और शेष स्वस्थ रहते हैं। इससे एक बात समझ में आती है कि जीवाणु भी अपने लिए अनुकूल शरीर में ही रोग पैदा करते हैं। शरीर सबल हो तो जीवाणुओं का प्रभाव नहीं होता। शरीर का बल बात-पित्त-कफ इन तीनों दोषों की समावस्था के कारण होता है। अतः दोषों को समान परिमाण [अपने निश्चित परिमाण] में बनाये रखने के लिए आयुर्वेद में उपाय बताये गये हैं।

इसके अलावा, जीवाणुओं से होने वाले रोगों में बात-पित्त-कफ के विगड़ने से ही लक्षण पैदा होते हैं और चिकित्सा से ये दोष ठीक होकर नक्षण जान्त होते हैं। यह बात ध्यान देने योग्य है कि ये दोष किसी यन्त्र आदि की सहायता से दिखाये नहीं जा सकते। इनसे विगड़ होने पर कुछ खास लक्षण पैदा होते हैं। आयुर्वेद में भी इनकी पहचान अच्छे और खराब लक्षणों के द्वारा ही बतायी गयी हैं। ये लक्षण इन दोषों के गुण और कम हैं। इन लक्षणों को देखकर ही दोष की समता, वृद्धि [वढ़ना] और व्रास [घटना] का निश्चय किया जाता है। चिकित्सा का परिणाम भी इन्हीं लक्षणों को जाचकर किया जाता है। इस प्रकार-आयुर्वेदिक चिकित्सा लक्षणों पर निर्भर रहने वाली चिकित्सा होने पर भी केवल लाक्षणिक चिकित्सा [सिम्प्टोमेटिक ट्रीटमेन्ट] से इसमें मिलता है। आयुर्वेद में, लक्षणों को देखकर किसी दोष के घटने या बढ़ने का, लक्षणों के न्यूनाधिक घटने या बढ़ने का तथा उसका कारण देखा जाता है, अर्थात् किस कारण से और कितने परिणाम में कोई लक्षण पैदा होता है। इससे चिकित्सा का लक्ष्य मूलगामी [रेडिकल] होकर भी उन्मूलक [क्यूरेटिव] बन जाता है।





चिकित्सा का प्रयोजन और उसके अंग



शरीर की रचना (स्ट्रक्चर फार्मेशन) जिन पदार्थों से होती है उन्हे 'धातु' (शरीर का और पोषण करने वाले पदार्थ) और 'मल' (शरीर के उपयोग में आने पर वचे हुए और शरीर से बाहर निकाल दिये जाने वाले पदार्थ) से होता है। धातुओं और मलों का पोषण, क्रिया और गति, जिन पदार्थों से होती है, उनको 'दोष कहते हैं'। इनको 'दोष' अर्थात् 'खराब' इसलिए कहा जाता है कि ये ही पदार्थ स्वयं पहले विगड़ कर फिर अपने द्वारा पोषित और क्रियाशील धातुओं और मलों को खराब करके रोग उत्पन्न करते हैं और इनके सम प्रमाण में होने पर धातुओं और मलों का पोषण और कार्य भी ठीक बन जाता है इसीलिए शरीर के मूल (आधारभूत कारण) तीन प्रकार के पदार्थ कहे गये हैं — दोष, धातुओं और मल ।

“ दोषधातुमलमूला हि शरीरम् ॥ ”

१ दोष ३ तीन हैं—वात, पित्त, कफ ।

२ धातु ७ सात हैं—रस, रक्त मांस, भेद [चर्वी], अस्थि [हड्डी], मज्जा [हड्डी में रहने वाली चर्वी], और शुक्र [स्त्रियों में आर्तव] । [पुरुष के शुक्र और स्त्री के आर्तव के मिलने से ही गर्भधारण होकर सतान पैदा होती है ।]

३ 'मल' मुख्य रूप से ३ हैं—टट्टी पेशाब और पसीना (प्रत्येक धातु और उसकी उप-धातु का भी अलग-अलग मल 'वेस्ट मेटर' होता है ।

इन दोषों को खराब करने वाले और उनके जरिये धातुओं और मलों को खराब करने वाले कारण सक्षेप में तीन ही हैं ।

१ काल अर्थात् ऋतुओं का मौसम की गडबड़ी [कम होना

गलत होना, और अधिक होना]

२ श्रव्य [शरीर को बनाने वाले पचमहा भूत] का कम, गलत या अधिक होना । ।

३ कर्म [शरीर मन और वाणी की प्रवृत्ति को 'कर्म' कहते हैं] का कम गलत या अधिक होना इन कारणों से दोपों में विगाड़ हो जाना है ।

जैसा की हम ऊपर वता चुके हैं, दोपों का घटना या बढ़ना [खासकर बढ़ना या कोप] रोग को पैदा करता है । अतः चिकित्सा का मूल उद्देश्य ही (१) बढ़े हुए दोपों को निकाल कर अथवा घटाकर समप्रभाव में लाना (२) घटे हुए दोपों को बढ़ाकर समप्रभाव में लाना (३) समप्रभाव में रहने वाले दोपों को समप्रमाण में बनाये रखना है ।

बातपित्त कफ दोप जब दिखाई नहीं देते तो इनका निश्चित परिमाण कैसे जाने ? यह प्रश्न जटिल होने पर भी इसका समाधान बहुत सरलता से किया जा सकता है । दोष घटने पर अपने गुण और कर्मों को त्याग देते हैं] अर्थात् उनके गुणकर्म हो जाते हैं] बढ़ने पर अपने गुणों और कर्मों को अधिक प्रमाण में करने लगते हैं इन से ही [बढ़े हुए दोपों से] अक्सर रोग पैदा होते हैं । जब समप्रभाव में रहते हैं तो अपने गुण और कर्म प्राकृत रूप में करते रहते हैं । इन प्राकृत गुण कर्मों के अर्थात् दोपों के प्राकृत लक्षणों को देखकर ही उनके परिमाण में रहने का निश्चय किया जाता है । प्रत्येक व्यक्ति में अपनी प्रकृति, आयु, लिंग देह काल आदि के अनुसार दोपों का निश्चित या समप्रभाव भिन्न-भिन्न होता है अर्थात् एक व्यक्ति में वात जितने प्रमाण में रहकर सम निश्चित या अनुकूल या प्राकृत दशा में रहता है वह दूसरे व्यक्ति में कम या अधिक हो सकता है । अत उस दूसरे व्यक्ति के लिए वात का भिन्न ही प्राकृत प्रभाव होता हैं यही नहीं एक ही व्यक्ति में दोष का निश्चित समप्रमाण लिंग, वय दिन-रात-ऋतु भोजन व उसके काल अवस्था और देश के अनुसार बदलता रहता है, परन्तु उससे कोई बुरे लक्षण पैदा नहीं होते अत वह प्रमाण बदलते रहने पर भी प्राकृत या सम ही माना जाता है ।

इस प्रकार दोपों का प्रकोप ही रोग का मूल है । इस बात को ध्यान में रखते हुए चिकित्सा में चार वातों का उपयोग होता है ।

१. स्नांशांधन — वहुत अधिक बढ़े हुए दोपों को ब्रमन (उल्टो कफ में) विरेचन (कोण्ट गुद्धि द्वारा पित्त में और वस्ति (एनिमा द्वारा वात में) से निकाल दिया जाता है ।

२. स्नांशासन — जो दोप अधिक बढ़े हुए नहीं है उनको दवा देकर शरीर के भीतर ही ठीक किया जाता है ।

३. परहेज़ वाला अनन्नपान — दिया जाता है । (आहार)

४. आच्चार्द (बिहार्द).— परहेज की वातों का पालन करते हुए रखा जाता है ।

किन कारणों से दोप बढ़ते या कुपित होते हैं और उनके बढ़ने से शरीर में कौन कौन से गुण कर्म या लक्षण पैदा होते हैं जिनके द्वारा उनको पहचाना जाता है, इसका वर्णन आयुर्वेद ग्रास्त्र में विस्तार से मिलता है ।

(१)

दवा बनाने और उनके इस्तेमाल करने के सम्बन्ध में खासतौर से जानने योग्य बातें

(१) इस पुस्तक में हमने सामान्यतया वैद्यो में प्रचलित नुसखों का सम्बन्ध किया है। कुछ ऐसे नुसखे हैं जो राजस्थान की सम्मान्य वैद्य परम्परा और, राजकीय वैद्यो और हमारी व्यक्तिगत वैद्य-परम्परा में काम में लिये जाते रहे हैं, उनका भी इसमें उल्लेख किया गया है। ये नुसखे अधिक उपयोगी और लाभकारी हैं।

(२) इसमें उन्हीं दवाओं को लिखा गया है जो सामान्य व्यक्ति अपने घर पर ही आसानी से बना सकता है। अतः खासकर जड़ी-बूटी का स्वरस (रस), कल्क (लुगदी), क्वाथ (काढ़ा), चूर्ण और गोली के रूप में नुसखे लिये गये हैं।

(३) दस-च्या - रुच्य-दसः—यह दो प्रकार से बनाया जाता है। ताजी और गीली औषधि को लेकर साफ पानी से धो लें और उसे कूट-पीसकर, कपड़े में रखकर अथवा दोनों अंगुलियों या हथेलियों में दवाकर-निचोड़कर रस निकाले। आजकल नीबू, मूली आदि का रस निकालने के लिए प्रेशर मशीन भी बाजार में मिलती है, इनका भी रस निकालने के लिए आवश्यकतानुसार इस्तेमाल किया जा सकता है। जिन द्रव्यों में रस खूब होता है, उनका रस निकालने के लिए यह विधि बरतनी चाहिए।

परन्तु जिन द्रव्यों में रस अधिक नहीं होता उनसे उपर्युक्त विधि से रस नहीं निकाला जा सकता। जैसे-नीम, अङ्गूष्ठा, बेल की पत्तिया आदि। इनसे रस निकालने के लिए 'पुटपाकविधि' बरती जाती है। इसकी यह विधि है कि—द्रव्य को साफकर उसे कूटकर या सिल पर बाटकर लुगदी बना लेते हैं। इस लुगदी को चारों ओर से

आम या बरगद के पत्तों से लपेटकर मूत से धाघ दें, फिर उस पत्तों पर अच्छी-गीली मिट्टी का एक अगुल मोटा लेप कर दे। उसे जरा मा सुखाले और आग के बीच में रख दे। जब आग में ऊपर की मिट्टी लाल हो जाय तो उसे निकाल कर पूरा ठड़ा करने से पहले ही मिट्टी को धीरे-धीरे हटाकर लुगदी को निकाल, कपड़े में लपेट, निचोड़कर रस निकाल लेवे।

(iii) **कल्क या लुगदी** — ताजी हरी दवा को अथवा सूखी दवा को पानी में कुछ समय तक भिगोकर अच्छी तरह भीग-गल जाने पर निकालकर कूट पीसकर चटनी जैसा बना लें। इसे 'कल्क' या 'लुगदी' कहते हैं।

(iv) **कचाय-काढ़ा** — सूखे हुए द्रव्यों को जी-कूट कर (मोटा दरदरा कूटकर), यदि द्रव्य मृदु (जैसे फूल, पत्ती आदि) हो तो उसमें चारगुना पानी मिलावे, यदि द्रव्य मध्यम (जैसे छाल, पचाग आदि) हो तो उसमें आठ गुना पानी मिलावे और यदि द्रव्य कठिन (जैसे लकड़ी आदि) हो तो सोलह गुना पानी मिलावे और मदी आच पर मिट्टी के पात्र या कलई वाले धातु के पात्र में ढक्कन बदकर पकावे। मृदु और मध्यम द्रव्यों को क्रमशः चौगुना और आठ गुना जल में पकाकर चौथाई शेष रखना चाहिए तथा कठिन द्रव्यों को सोलह गुने पानी में पकाकर आठवा हिस्सा शेष रखना चाहिए। काढे को प्रांच से उतारकर, छानकर, फिर उसमे, शहद, मिश्री, हिंग आदि (यदि मिलाने के लिए लिखा हो तो) मिलाकर गुनगुना (कफ व वायु के रोगों में) अथवा ठण्डा करके (पित्त के रोगों में) पिलावे।

(v) **चीरपाक** — अर्थात् दूध में पकाकर दवा लेना हो तो दवा का मोटा चूर्णकर १५ गुने दूध और उतने ही पानों को मिलाकर पकावे। दूध मात्र शेष रहने पर उतार कर छान ले।

(vi) **चूर्ण** — सूखी दवा को कूट-पीटकर महीन कर कपड़ छान कर ले। इसे 'चूर्ण' कहते हैं।

(vii) **गोली** — गुड, शक्कर, गुगल, जल, गोद का लुध्राव आदि में दवा के चूर्ण को मिलाकर घोटकर, गोली बनाते हैं। इसके लिए चूर्ण से शक्कर चौगुनी, गुड दुगुना और गुगल या शहद चूर्ण के बराबर लेना चाहिए।

ग्रायुर्वेद-शास्त्र में दवा बना बनाने की प्रत्यक्ष कल्पनाएँ—जैसे अवलेह, आसव, अरिष्ट, घृत, तेल, रस भस्मे आदि प्रचलित हैं परन्तु उनको सामान्य व्यक्ति नहीं बना सकता। अनुभवी और कुशल वैद्य ही उनका निर्माण करना जानते हैं। अत उनका यहां प्रयोग नहीं किया गया है।

(४) इस पुस्तक में जिन नुस्खों के द्रव्यों को कितना लेने का उल्लेख जहाँ नहीं किया गया है, वह वहा उन सब द्रव्यों को वरावर-वरावर लेना चाहिये।

(५) फिटकरी और सुहागे की शुद्धि, उनकी खील या फूली बनाने से होती है। इसकी यह विधि है—फिटकरी या सुहागे को वारीक पीस ले। फिर तवे पर मदी आंच पर इसे बुरका कर भूने। प्रथम इनके अन्दर का जल निकलेगा और तरल बन जावेगा, फिर भी दवा को चम्मच से चलाते रहे। थोड़ी देर बाद सारा पानी सूख जायेगा और दवा फूलकर ढला या चूर्ण बन जावेगी। इस फूली को पीसकर काम में लेवे।

(६) इस पुस्तक में कुछ थोड़े से नुस्खों में ‘शुद्ध शिलाजीत’ का उल्लेख आया है। शुद्ध की हुई शिलाजीत बाजार में दवा बेचने वालों के यहा मिलती है। घर पर शिलाजीत को शुद्ध करने की विधि बहुत कठिन है। फिर भी यदि कोई बनाना चाहे तो किसी अनुभवी वैद्य से परामर्श लेकर इसे तैयार कर सकता है।

(७) इस पुस्तक में जो मात्राएँ लिखी हैं, वे पूरी उम्म (जवान) वाले लोगों के लिए समझनी चाहिए। वच्चों को उससे आधी या चौथाई मात्रा अथवा वय देखकर उससे भी कम देनी चाहिए। इसी प्रकार बहुत बूढ़े लोगों और गर्भवती स्त्रियों को मात्रा कुछ कम ही देनी चाहिए।

(८) यहा दवा की तील रत्ती, माशे और तोले में बनायी गई है। इन्हें नवीन प्रचलित बाटों में इस प्रकार बदल कर काम में लिया जा सकता है।

१ रत्ती	=	१२५ मिलिग्राम)	तरल—
१ माशा	=	१ ग्राम) १ तोला १० मिली
१ तोला	=	१२ ग्राम) लीटर

(६) दंवा न्द्रेन्ने का उत्तम चर्चा—शास्त्र में दंवा लेने के अलग-अलग समय बताये गये हैं। प्रातःकाल खाली पेट लेना, भोजन के ठीक पहले लेना, भोजन के बीच में लेना, भोजन के बाद लेना, सायकाल के भोजन के बाद लेना, वार-वार लेना, भोजन के पहले और पीछे लेना, भोजन के साथ लेना, ग्रन्त के ग्रास में मिलाकर लेना, दो ग्रासों के बीच लेना, रात में सोने के समय लेना आदि।

व्यवहार में भोजन में रुचि के लिए भोजन से पहले लेना, पित्त को शान्त करना हो तो भोजन के तुरन्त बाद क्षार आदि लेना, भूख बढ़ाने वाली दंवा भोजन के पहले और भोजन को पचाने वाली दंवा भोजन के बाद, आतों की गति को ठीककर दस्ते साफ लाने वाली दंवा भोजन के एक दो घण्टे बाद और सभी रोग शामक दंवाएँ और्मी-शंथ के खाली रहने पर सुबह और शाम लेनी चाहिए।

(१०) रोगों की परिच्छया (खेबा-खुश्रुषा) परहेज से—रहने का बीमारी के ठीक होने में बहुत सहयोग मिलता है। घर के व्यक्तियों को रोगी के रहने, दंवा देने और खाने पीने के लिए पूरी सावधानी और वैद्य के निर्देश का पालन करना चाहिए। लोलिम्बराज ने ठीक ही कहा है—“पथ्य से रहने पर औषधि की कोई आवश्यकता नहीं रह जाती और पथ्य के ठोकन रहने पर औषधि की कोई आवश्यकता नहीं श्रथति, पथ्य से न रहने पर दंवा कोई प्रेभाव नहीं कर सकती।”

(११) रोगी को हमेशा तरल, लघु और सुपाच्य आहार देना चाहिए। विश्राम करने से बीमारी जल्दी ठीक होती है। रोगी के रहने का स्थान हवादार तो हो, परन्तु उसमें तेज हवा के भूके न आने पावें।

अध्याय-४

(३)

बुखार (जवर-अंग्रेजी-फीवर)



पहिचान — सब वीमारियो में बुखार सबसे अधिक महत्वपूर्ण है। शरीर के स्वाभाविक तापमान का अधिक हो जाना 'बुखार' कहलाता है।

बुखार पैदा होने के अनेक कारण हैं। ठन्डे लगना, वर्षा में भीग जाना, अत्याधिक शारीरिक और मानसिक श्रम करना, चोट लगना, तेज धूप या अग्नि के ताप में काम करना या धूमना, भोजन की अनियमितता अधिक भोजन करना, अधिक समय तक भूखा रहना, नसीले पदार्थ-शराब आदि अधिक पीना, किसी विष का शरीर में पहुचना, आमाशय या आतो की गड़वड़ी, कब्ज रहना, दिन में अधिक सोना, रात को जागना, आदि। इनके अतिरिक्त विशेष प्रकार के जीवाणुओं के शरीर में प्रवेश करने से भी बुखार हो जाता है।

जवर में सामान्य रूप से कोष्ठ की अग्नि विकृत होती है। मिथ्या (अनुचित) आहार और विहार के कारण अमाशय में प्रकृष्टि वात, पित्त और कफ पहुचकर कोष्ठाग्नि को बाहर निकाल देते हैं और स्वयं भी रस में मिलकर सारे शरीर में फैल जाते हैं।

सामान्य रूप से सभी प्रकार के बुखारों में पसीना निकलना बन्द हो जाता है शरीर का ताप बढ़ जाता है और सारे शरीर में जकड़ा-हट और पीड़ा प्रतीत होती है। इसी प्रकार मन में वेचैनी, किसी काम में मन न लगना और ग्लानि का अनुभव होना ये लक्षण भी पाये जाते हैं।

बुखार चढ़ने से पहले विना काम किये ही थकान मालूम होना, सुस्ती रहना, मुह का स्वाद नष्ट हो जाना, आखों से पानी आना, ठण्ड-हवा-धूप कभी अच्छी लगना और कभी नहीं लगना, जम्भवाई आना, शरीर में भारीपन मालूम होना, रोमाच होना, अधेरी आना, मन की प्रसन्नता न रहना और ठण्ड लगना आदि लक्षण मिलते हैं। इन लक्षणों के होने पर यह समझ लेना चाहिए कि कुछ ही देर बाद बुखार होने वाला है।

सामान्य प्रकार के बुखार में उपरोक्त लक्षण होते हैं। विशिष्ट प्रकार के बुखारों में अलग-अलग लक्षण होते हैं, इनका वर्णन हम आगे करेंगे।

बचने के उपाय—इसी प्रकार के बुखारों से बचने के लिए यह आवश्यक है व्यक्ति नियमित और अपने द्वारा पच सके इतनी मात्रा में समय पर भोजन करे, ठण्ड से बचे और अधिक तेज धूप या गर्मी में न जावे, जल का उचित मात्रा में सेवन करे, नशीली वस्तुएं अधिक प्रयोग में न लावे गरीर को सहन हो सके उतना ही शारीरिक और मानसिक श्रम करे।

चिकित्सा.—बुखार चढ़ते ही रोगी को ऐसे कमरे में सुलावे जहा तेज हवा नहीं आती हो, किन्तु मामूनी हवा का आना-जाना वरावर रहता हो, रोगी को मुलायम विस्तर पर लिटा-ओढ़ने के लिए मोटा और गरम कपड़ा देवे। खाने को कुछ न दे। भूख लगी होने पर भी अन्न नहीं दे, गरम दूध, सावूदाना आदि हल्के पदार्थ दिये जा सकते हैं। पीने के लिए उबालकर ठण्डा किया हुआ जल देवे। इस पानी को रोगी को बार-बार पीने को देना चाहिए। अधिक मात्रा में जल पीने से शरीरगत दोष और विष मल, मूत्र व पसीने से बाहर निकल कर बुखार हल्का पड़ जाता है। परन्तु ठण्डा पानी कदापि नहीं पीवे। ब्रह्मचर्य का पूर्णतया पालन करे। बुखार की दशा में स्नान करना, मालिश करना, भोजन करना, दिन में सोना, किसी भी प्रकार का शारीरिक और मानसिक परिश्रम करना, खुली तेज हवा में बैठना, चिन्ता या शोक या क्रोध करना—विलकुल छोड़ देना चाहिए।

उपर्युक्त पथ्य का पालन करते हुए पूर्ण आराम करने से मामूली बुखार विना दवा के ठीक हो जाता है। रोगी को पसीना आये

तो तौलिये से पोछ, देना चाहिये, पर ऐसी दशा में बदन को पूरा खुला नहीं करना चाहिए।

कब्जियत या बदहजमी के कारण होने वाले बुखार में दस्त खुलकर लाने वाला और अग्नि को बढ़ाने वाला मामूली जुलाब देना चाहिए। इसके लिए ‘आचोर्यपञ्चक’ (हरड़, कुटकी, अमलतास, निशोथ और आमला) का मिला हुआ जौकूट चूर्ण बना खावे। इसकी २ तोला मात्रा को आधा सेर जल में उबाले, चौथाई पानी वाकी रह जाय तो उबालकर छान ले। इसमें थोड़ा शनूद मिला कर पिलावे। इससे बुखार उत्तरता है और पेट भी सोफ हो जाता है।

छोटी हरड़ (जीहरड़) का चूर्ण ६ माशा और काला नमक ४ रत्ती मिलाकर गुलगुने जल के साथ लेने से दस्त साफ होता है। सुकुमार लोगों को पेट साफ रखने के लिए मुनक्का (१० नग), अजीर (२-३ नग, टुकड़े करके) जल या दूध में उबालकर पीना चाहिए। इससे बुखार, खासी, जुकाम भी कम होता है और दस्त साफ आते हैं।

कफ उवर

घहिच्चान्न—कफ उवर में शरीर भारी होता है, सरदी लगती है, रोगटे खड़े होते हैं, नीद और ऊंघ अधिक आती है, मुँह का स्वाद मीठा होता है और कफ से भरा रहता है। भूख नहीं लगती, पसीना नहीं आता, आलस्य होता है, बुखार तेज नहीं रहता, कफ की उल्टी होता है, शरीर ढीला पड़ जाता है, खासी, जुकाम, मल-मूत्र और नेत्र की सफेदी होती है।

चिकिच्चन्ना—[१] सोठ तीन माशा को १/२ पाव जल में उबालकर, आधा वाकी रखे। फिर गुनगुने काढ़े में ही मिश्री मिलाकर पीवे।

[२] काली मिर्च ५ नग, तुलसी के पत्ते ५ नग, लौग १ नग अदरक १/४ तांला और बड़ी इलायची १ नग को उपयुक्त विधि से अथवा चाय के साथ उबालकर पीवे। इस प्रकार दिन में ३ बार लेवें।

[३] छोटी पीपल का चूर्ण (४ रत्ती से १ माशा) शहद के साथ चाटने से श्वास, खासी के साथ बुखार को आराम करता है।

इससे पुराना ग्रीर ठण्ड लगकर आने वाला, ग्रांतरे से आने वाला बुखार
(मलेरिया—विपमज्वर) भी ठीक होता है ।

[४] अदरख का रस (१/२ तोला) या पान का रस
(१/२ तोला) में गहद मिलाकर दिन में २-३ बार चाटने में कास,
ज्वास, प्रति इयाय (जुकाम) और कफजन्य बुखार दूर होता है ।

[५] कायफल, पोहकरमूल, काकडासीगी और छोटी पीपल
(वरावर लेकर) सब का चूर्ण बना ले । ३ माशा चूर्ण को गहद में
मिलाकर सुवह-गाम चाटने में कफ ज्वर, खासी और कफ गिरना
बन्द होता है ।

पित्तज्वर

पहिचान.—पित्त ज्वर में बुखार तेज रहता है, दस्ते
लगती हैं, नीद कम आती है, पित्तकी (कडवी-चरपरी) उल्टी होती है
गला होठ, मुख-नाक आदि में पाक हो जाता है या उनमें छाले या
फफोले पड़ जाते हैं, पसीना अधिक आता है, रोगी सोते समय वकवास
करता है, मुह का स्वाद कडवा हो जाता है, बेहोशी हो जाती है, जलन
होती है, प्यास बहुत लगती है, गर्मी का नगा-सा चढ़ा रहता है, नेत्र
मल मूत्र का रंग पीला होता है, चक्कर आने लगते हैं ।

चिकित्सा — (१) १/२ तोला पित्त पापडा का चूर्ण
रात में छटाक पानी में भिगो देवे सुवह मसलकर छानकर रोगी को
पिलावे । इसमें पित्त ज्वर, दाह, प्यास आदि दूर होते हैं ।

(२) ३ माशे सफेद जीरा और ६ माशे मिश्री के चूर्ण को ठन्डे
जल के साथ फाकने से पित्त ज्वर शान्त होता है अथवा ६ माशे जीरा
को पानी में पीसकर मिश्री मिलाकर पिला दे ।

(३) कुटकी २ मात्रा को १/२ पाव जल में उबाले, चौथाई शेष
रहने पर उतारकर छानकर मिलाकर पिलावे ।

(४) चिरायता १ तोला को १ पाव जल में उबालें, आधा
वाकी रहने पर, उतारकर छानकर पीवे । (विशेष कुटकी और चिरा-
यता से पुराना विपम ज्वर मलेरिया बुखार (ठन्ड) लगकर आतरे
से आनेवाला बुखार) भी ठीक हो जाता है ।

(५) बुखार बहुत तेज होने पर उसे कम करने के लिए माथे

पर ठन्डे पानी की पट्टिया रखनी चाहिए ।

(६) मुनक्का, मुलेठी, नीम की छाल और कुटकी इनका काढ़ा बनाकर रात भर ठण्डक में खुला रख देवे । सुबह छानकर पिलावे । इससे पित्त ज्वर नष्ट होता है ।

(७) जवासा, पित्त पापडा, फूलप्रियगु, चिरायता, अदूसा और कुटको का काढ़ा बनाकर मिश्री या शक्कर मिलाकर पीने से प्यास, खून गिरना, पित्त ज्वर और जलन शान्त होते हैं ।

(८) ५-७ लौंग जल के साथ घिसकर देने से तेज ज्वर कम होता है ।

वातज्वर

पहिचान —वात ज्वर में कफ अधिक होता है, बुखार कभी कम और कभी अधिक होता है, गला-होठ, मुख बराबर सूखते हैं । छीक व नीद नहीं आती, शरीर में अकड़न होती है, खांसी अधिक होती है, सिर-हृदय और सारे अंगों में पीड़ा होती है, मुख का स्वाद फीका मातृम होता है । जभाई अधिक आती है । कब्ज, अफारा और पेट में शूल होता है ।

चिकित्सा —[१] बड़े पचमूल (बेल सोनापाठा, खभार, पाढ़ल, अरनी इन पाचों के मूल की छाल), गुड़ची आवला और धनिया—इनको बराबर भाग में मिला लेवे । इसको २ तोला लेकर १ पाव जल में उवाले शेष १ छटाक रहने पर छानकर पिला दे । इससे वात ज्वर शान्त होता है ।

[२] सौठ १ तोला और मैघा नमक २ माशा इनका चूर्ण मिलाकर रखले । इसमें से १ से ३ माशा गरम जल से (दिन में २-३ बार) दे तो तीव्र वात ज्वर शान्त होता है ।

अर्जीर्णा ज्वर

पहिचान —वदहजमी के कारण होने वाले बुखार में उदर में पीड़ा होना, उलटी होना, दस्त होना ज्वर होना ये लक्षण होते हैं ।

चिकित्सा - (१) हरड़, अंजवायन और काला नमक समान मात्रा में लेकर चूर्ण कर ले। ६ मात्रा चूर्ण गरम पानी से पीवे।

मल ज्वर

पहिचान — कद्द छोड़ होने पर गला सुखना, भ्रम होना (चक्कर आना), दाह होना, वक्वास करना, सिर में दर्द और बुखार, ये लक्षण होते हैं।

चिकित्सा - (१) निशोथ और हरड़का क्वाय बनाकर उसमें अमलतास का गुदा १ तोला और मुसव्वर (एलुआ) ३ मात्रा मिलाकर धीने से दम्त साफ आता है, और 'मलज्वर' ठीक हो जाता है।

(२) दोनों जीरे (सफेद और स्थाह) चिंता, हरड़, अंजवायन के चूर्ण को निम्बू के रस में घोटकर सुखाकर रख ले। ३ मात्रा चूर्ण गरम जल से देवें, तो मल खुलामे के साथ आता है और बुखार उतर जाता है।

जीरा ज्वर

पहिचान — तीन सप्ताह के बाद भी ज्वर बुखार नहीं उतरता, तो ऐसा बुखार पुराना या 'जीरा ज्वर' कहलाता है। इसमें कफ कम हो जाता है, वायु बढ़ जाता है और गहरी धातुओं में घर कर लेने से प्राय मौंद बुखार रहने लगता है। खून की कमी, भूख नहीं लगता, और प्लीहा बढ़ जाता — ये लक्षण होते हैं।

(यक्षमा और काल ज्वर में ३ सप्ताह के बाद भी बुखार बना रहता है, परन्तु वह जीरा ज्वर नहीं कहलाता, क्योंकि इन रोगों में लम्बे समय तक बुखार बने रहने की प्रवृत्ति होती है।

चिकित्सा - (१) छोटी पीपल का चूर्ण ४ रत्ती, गुड़ १/२ तो ० में मिलाकर, गरम जल के साथ खावे।

(२) छोटी पीपल का चूर्ण ४ रुपये में उबालकर पिलावे।

(३) कब्ज होने पर कुटकी चूर्ण ३ मात्रा, १/२ पाव जल में

उवालकरं चौथाईं रहने पर छानकरं पिलावें ।

(४) चिरायता ६ माह, पूर्वोक्त विधि से उवालकर पिलावे ॥
गिलोय के रस १ तो० मे पीपल का चूर्ण २ रु० मिलाकर पिलावे ।

(५) गिलोय २ तो० को कुचलकर १ पाव जल मे उवालकर-
चौथाईं रहने पर छानकर शहद व पीपल का चूर्ण २ रती मिलाकर
पिलावे ।

(६) गिलोय का सत्व १ माह, गोदन्ती की भस्म १ माह,
वशलोचन ४ रु० और पीपल का चूर्ण २० मिलाकर शहद के साथ सुबह
और शाम उठावे ।

(७) नीम की भीतरी छाल का काढा पिलावे ।

(८) घनिया और पित्त पापड़े का काढा, मिश्री मिलाकर
पिलावे । इससे जर्लन भी शात होती है ।

(९) दाढ़ हल्दी ३ तो० को कुचल कर ३ पाव जल मे उवाले
१ पाव वाकी रहने पर छानकर दिन मे दो बार पिलावे । यह सब
प्रकार के जीर्ण ज्वर में हानि रहित दवा है ।

बुखार उत्तरने के लक्षण

बुखार के हटने पर पसीना आता है । सारा शरीर हल्का प्रतीत
होता है, सिर में खुजली होती है मुँह पक जाता है, और भोजन की इच्छा
होती है ।

बुखार उत्तर जाने पर क्या न करें

बुखार उत्तर जाने पर भी निम्न बातों को परहेज तब तक
करना चाहिए जब तक व्यक्ति फिर से बलवान नहीं हो जाता ।

(१) व्यायोम परिश्रम (२) मैथुन (३) स्नान (४) धूमना ।

इनका परहेज नहीं रखने पर बुखार फिर से हो जाता है, और
कमजोरी बढ़ जाती है ।



प्रचलित विशिष्ट आगन्तुज (संक्रामक) छूत से फैलने वाले ज्वर

सन्निपात ज्वर, अंत्रिक ज्वर, मन्थर ज्वर
मुक्ता ज्वर, टाईफाईड फीवर

पहिचान — (योगरत्नाकर में इस ज्वर का वर्णन 'मन्थर ज्वर' या 'मधुर ज्वर' के नाम से किया गया है। इसे मोतीभरा भी कहते हैं। यह एक संक्रामक ज्वर है यह त्रिदोष या सन्निपात से होता है सतत ज्वर लगातार रहने वाले बुखार का प्रकार है। इसमें मुख्य विकृति छोटी आतो की ग्रथियों में सूजन और घाव के रूप में होती है। बुखार निरन्तर २१ दिन तक बना रहता है। सिर में पीड़ा, नाड़ी की गति बन्द होना, उदर का वायु से फूलना और दर्द होना, पतले दस्त लगना, जीभ बीच में भौंली और किनारे पर लाल होती है। नाड़ी ज्वर की अपेक्षा मद होता है। उदर पर दाहिने लक्षण प्रदेश पर दबाने से पीड़ा और गुडगुड़ाहट होतो है। रोगी हमेशा ऊधने जैसी दशा (तन्द्रा) में रहता है। चमड़ी पर सरसो जितने बड़े सफेद चमकदार मोती जैसे या हल्के गुलाबी रंग के दाने पाये जाते हैं प्लीहा भी कुछ बढ़ जाती है।

बुखार प्रारम्भ होने के बाद पहले सप्ताह में बुखार धीरे-धीरे बढ़ता जाता है। सुबह बुखार कम होता है और शाम को १०३-१०४° पर तक हो जाता है। दूसरे सप्ताह में बुखार प्राय एक समान बना रहता है और १०४-१०५° तक रहता है। तीसरे सप्ताह में धीरे-धीरे उतरने लगता है। रोगी दुर्बल हो जाता है। चौथे सप्ताह में बुखार विल्कुल उतर जाता है।

दूसरे हफ्ते में सुबह और शाम के बुखार में बहुत अल्प अन्तर (१-२ फो० डिग्री का) होता है। इसी सप्ताह में आतो में रक्तस्राव होना और घाव बनने की सभावना रहती है। अत इस काल में पूरी हिफाजत रखनी चाहिए।

अन्युने के उपाय — यह बुखार पानी में

जीवाणु के होने के कारण होता है। कभी-कभी वर्षा और शीत ऋतुओं के प्रारम्भ में प्रहामारी के रूप में फैलता है। इन कालों में मक्खिया जीवाणुओं को एक जगह से दूसरे जगह ले जाने का काम करती हैं तथा जल और खाद्य वस्तुएं भी दूषित हो जाती हैं। इससे बचने के लिए, पानी उबालकर पीये, ताजी और हरी सब्जियाँ व फलों का प्रयोग करें, सड़े गले फलों को न खायें। इन चीजों को इस्तेमाल करने से पहले साफ जल से या लाल द्वाका मिले जल से धो लेवे। भोजन भी ताजा और हल्का करें। भरपेट न खायें। पेट की गडबड़ी और अंजीर्ण न होने देवे। कब्ज भी न रहने देवे गंदी नदी, तालाब, बावडियों का जल न पीवे। रोगी के सम्पर्क में आने वाले बर्तन, कपड़े फर्नीचर आदि को साफ किये विना दूसरे व्यक्ति इस्तेमाल न करें।

चिकित्सा — (१) रोगी को विस्तर पर पूर्ण आराम करना चाहिए। उसे हिलने-हुलने भी न दे।

(२) तीव्र ताप हो (१०३ फारू से अधिक) तो सिर पर ठण्डे पानी की पट्टिया रखें।

(३) पेट में दर्द अधिक हो तो गर्म जल की थैली से हल्का सेक करें।

(४) रोगी को खाने को कुछ नहीं देवे। केवल दूध, जौ के पानी अथवा फलों के रस (अङ्गूर का रस या मीठे अनार का रस, मोसम्मी का रस) दे सकते हैं। बुखार उतरने लगे तो चावल की खील को जल में उबालकर पिलावें।

(५) रोगी को हमेशा पीने के लिए लौग का पानी देवे। १ तोला लौग को कूटकर १२ तोला पानी में उबाल कर जब आधा वाकी रहे तो उतार कर छानकर ठण्डा कर लेवे। इस जल को बार-बार पीने को देवे। उबालकर ठन्डा किया हुआ पानी ही पिलाना चाहिए।

(६) सफेद जीरा, गिलोय, पद्मनाख, इन्द्रजौ, चिरायता, बड़ी इलायची—इन सबको पानी में उबालकर काढ़ा पिलाना चाहिए।

(७) मोतीझरा के पहले सप्ताह में प्राय. कब्ज रहती है।

अमलतास का गुदा १ तोला और मुनक्का ५ नग उवालकर छानकर सुबह पिलाना चाहिए ।

(८) खूबकला ३ मासा, गावजुवा ३ मासा, गुलबनपथा ३ मास, तुलसी के पत्ते १०, गिलोय १/२ तोला, ब्राह्मी १/२ तोला, और काली मिर्च ५ नग, लेकर मिला लेवे । लगभग २ तोले को आठ गुने जल में पकावें । आधा जल शेष रहने पर उतारकर छान ले । ठण्डा होने पर दिन में २ बार सुबह और शाम को पिलावे ।

(९) खूबकला १ तोला और मुनक्का १ तोला अथवा केवल खूबकला १ तोला का काढ़ा बनाकर प्रातः सायम् पिलावे ।

कर्कटक सन्निपात ज्वर (श्वसनक ज्वर-न्यूमोनिया)

पहिंचान्त — इस बुखार में वात और कफ की अधिकता होती है। किन्तु इसकी यह विशेषता है कि बुखार बहुत तेज चढ़ता है। रोगों में ठण्ड लगने या पानी में भीगने का इतिहास मिलता है। यकायक ठण्ड लगकर बुखार चढ़ता है और कुछ ही घण्टों में बहुत तेज हो जाता है (104^0)। खांसी चलती है, सास फूलता है, पसलियों में दर्द होता है। सास की गति तेज और उथली होती है, ऐसा लगता है मानो रोगी ऊपर ही ऊपर सास ले रहा हो। सास और नाड़ी को गति में प्राकृत रूप में १ अनुपात ४ का अन्तर होता है (अर्थात् प्राकृत दशा में सास १ बार प्रति मिनट चलता है और नाड़ी की गति ७२ प्रतिमिनट होती है) यह अनुपात इस बुखार में १.३ या १.२ हो जाता है, क्योंकि इसमें साँस बहुत तेज चलता है। यदि रोगी वालक हो तो नाक के नशुने तेजी से हिलते—फड़कते दिखाई देते हैं। वालकों में प्रारम्भ में ठण्ड लगने के बदले आक्षेप (हाथ पैरों में झटके) होते हैं।

३-४ दिन के बाद खासी के साथ चिपचिपा मटमैला लाल रंग का कफ बहुत मुँहिल से खासने पर निकलता है। जीभ मैली रहती है। चमड़ी सूखी रहती है। नेत्रों और नखों में नीलापन आ जाता है। इस रोग में हृदय बहुत दुर्बल हो जाता है और दीमारी का जहर सारे गरीर में बहुत फैल जाता है, जिससे घबराहट बहुत होती है।

जिस ओर का फेफड़ा आक्रान्त होता है, उदर के पसवाडे में वेदना बहुत तेज होती है, और उससे रोगी चिल्खता है। दोनों ओर के फेफड़ों के आक्रान्त होने पर 'डवल निमोनिया' कहलाता है। अक्सर बुखार एक सप्ताह तक रहकर अचानक कम हो जाता है। इस समय पसीना और पतले दस्त हो सकते हैं। रोग की अवधि १०-१२ दिन की होती है।

बचने के उपाय — (१) ठण्ड से बचना चाहिए।
(२) रोग-ग्रस्त रोगी को दूसरे लोगों से अलग रखें।

चिकित्सा—(१) रोगी को पूर्ण विश्राम कराना चाहिए।

(२) इस बुखार में प्राय कव्ज रहती है। अतः हरड १ तोला अमलतास १ तोला और मुनक्का १ तोला का काढ़ा बनाकर पीने को देना चाहिए।

(३) अझूसा १ तोला और लिसोडा २ तोला को १ पाव पानी में औटाकर आधा रहने पर थोड़ी मिश्री मिलाकर पिलावें।

(४) पसली के दर्द के लिए वारहर्सिंगे का सीग घिसकर छाती पर लेप करें अथवा अरंड के पत्ते गरम कर पसलियों पर बांधे अथवा नमक की पोटली से सेक करना चाहिए अथवा पुराना धी और सेंधा नमक मिलाकर छाती पर मलना चाहिए।

(५) सांभरसीग की भस्म ४ रत्ती मुवह शाम शहद के साथ देने से पसली का दर्द कम होता है।

(६) लाल फिटकरी को आग पर पकाकर बनायी हुई खोल का चूर्ण (३ रत्ती), दिन में ३-४ बार शहद से चटावें। इससे कफ पतला होकर निकल जाता है और बुखार में भी आराम होता है।



श्लेष्मोल्वणसन्निपात ज्वर (श्लेष्मक ज्वर-इंफ्लुएंजा)



प्रदृष्टिचान्त—यह कफज ज्वर का एक प्रकार है। यह भी औपसिर्जिक रोग है। रोगी के खासने के समय निकले हुए थूक के कफो के द्वारा दूसरे व्यक्ति के शरीर में सक्रमण पहुचने से होता है।

ठण्ड लगकर शिर और हाथ-पैर में दूटने जैसी पीड़ा होने के साथ बुखार चढ़ता है। और जुकाम के लक्षण, जैसे-छीक, खासी, गले में दर्द, आखो में पानी आना, आखे लाल होना, होते हैं। जीभ मैली रहती है। रोगी बहुत कमजोर हो जाता है। किसी काम में उसका मन नहीं लगता। गला सुख्ख हो जाता है। पाच छ दिन बाद परीना आकर बुखार उत्तर जाता है।

इस बुखार में सारे वदन में बहुत दर्द और कमजोरी हो जाती है। इसमें जुकाम के सब लक्षण होते हैं। कभी-कभी यह बसन्त और शीत ऋतुओं में महामारी के रूप में फैलता है, तब यह मारक (धातक) होता है। इससे कुछ लोगों, विशेषकर बालकों और वृद्धों की मौतें भी हो जाती हैं।

बचाने के उपायः—(१) भीड़-भाड़ वाले स्थानों पर जाने से बचना चाहिए। (२) ठण्ड से बचाव रखना चाहिए (३) गरम, हल्का और स्वास्थ्य-वर्धक भोजन करें। (४) गले को साफ रखें। इसके लिए नमक गरम पानी में डालकर गरारे करें। (५) छीकते खासते समय रूमाल का इस्तेमाल करें, फिर उसे उबलते पानी में धो लें। इससे दूसरे पर सक्रमण नहीं पहुच सकता।

चिकित्सा—इसमें जुकाम की सब दवाएं देनी चाहिए। विश्राम करना आवश्यक है। गरम कपड़े पहनें। रोगी को ठण्ड से बचावे। रोगी को ऐसे कमरे में रखा जाय, जहां सीधी तेज हवा तो नहीं आये, पर शुद्ध हवा का आना-जाना होता रहे। स्नान न करे। खाने के लिए कुछ न दे। लघन कराये अथवा हल्का तरल

आहार देवे । खट्टे व ठन्डे पदार्थ न देवे । सोठ या पीपल ढालकर उबाला हुआ दूध पीने को दे । इससे बदन का दर्द भी ठीक होता है । कमजोरी मिटाने के लिए अजीर २ नग (टुकड़े कर) और उन्नाव (१० दाने) दूध में उबाले, अजीर और उन्नाव रोगी खा लेवे, गुठलिया फेक दे तथा ऊपर से दूध पी लेवे । उबाले हुए १ कप पानी में आधा नीबू निचोड़कर रस मिलाकर गरम-गरम एक-एक घूट पीते रहे । गले को साफ रखने के लिए नमक मिले हुए गुनगुने पानी के गरारे करे । गले को भाप से सेके ।



कनफेड या कनसुआ या गलसुआ (कर्णमूलिक शोथ ज्वर, मम्पस)



पहिचान — यह रोग प्रायः बच्चों और किशोरों
को होता है। रोगी के खासते समय थूक और कफ की बूदों द्वारा
दूसरे के शरीर में सक्रमण पड़ जाने से कान के पास स्थित लार की
ग्रन्थियों (कर्णमूल-ग्रन्थि) में सूजन पैदा करता है। यह सूजन कान
के सामने और नीचे के भाग में होती है। इससे उनमें बहुत दर्द होता
है, परन्तु ग्रन्थियों में पीप नहीं बनती। कभी-कभी नीचे के जबडे की
नीचे की ओर जीभ के नीचे की लार ग्रन्थियों में भी सूजन पैदा हो
जाती है। प्रारम्भ में एक ओर की ग्रन्थि में सूजन व दर्द होता है।
बुखार (१०२° फारॉ से १०४° फारॉ) रहता है, जो एक सप्ताह में शात
हो जाता है। ग्रन्थियों में सूजन तनाव और दर्द के कारण मुह खोलने
में तकलीफ होती है। ३-४ दिन बाद दूसरी ओर की ग्रन्थि में भी
सूजन व दर्द होता है। यह बीमारी तेजी से फैलती है परन्तु मृत्यु
नहीं होती। सिरदर्द, कान में दर्द, स्वर बैठ जाना, बेचेनी रहना,
निगलने में तकलीफ और लार अधिक गिरना—ये लक्षण भी होते हैं।
रोग की अवधि १० दिन होती है। दस दिन बाद बुखार उत्तर
जाता है।

बच्चों के उपाय — (१) जिन बच्चों में यह
बीमारी हुई हो, उन्हें दूसरे बच्चों से पन्द्रह-वीस दिन तक अलग रखे
और स्कूलों में जाने से भी रोके।

(२) गले को साफ रखने के लिए गरम पानी में नमक डालकर
गरारे करवाये।

(३) जिन वर्तनों व कपड़ों को रोगी ने काम में लिया हो,
उनका दूसरे बच्चों के लिए इस्तेमाल न करे।

(४) गर्म व ताजा भोजन करे ।

चिकित्सा — [१] रोगी को विस्तर पर पूर्ण विश्राम कराये । हवा और ठण्ड से बचाये ।

(२) उबाल कर खाहुआ जल पीने को दे लघन करावे ।

(३) नमक मिले हुए गम पानी से गरारे करे ।

(४) ग्रन्थि की सूजन पर सेक करे (नमक की पोटली या कपड़े से या गर्म पानी की थैली से) ।

(५) ग्रन्थि की सूजन पर कालीजीरी को पीसकर गरम कर लेप करे ।

(६) पेट साफ करने के लिए अंजीर और मुनक्का दूध में उबालकर देवे ।

(७) सूजन पर घतूरे की पत्तियों के रस का लेप करे ।

(८) वचनाग की जड़ पानी में धिसकर गरम कर सूजन पर लेप कर सकते हैं ।



कमर-तोड़ बुखार : दराडक ज्वर डेन्ज्यू फीवर



चिकित्सा — यह एक प्रकार के मच्छर के काटने से इस रोग के वाईरस का जरीर मे प्रवेश होने से पैदा होता है। इसलिए इस रोग का प्रसार सीलन वाले क्षेत्रों से वर्षा और वसन्त ऋतु से होता है। यह रोग आसाम, बगाल, हिमालय की तराई, बम्बई और मद्रास प्रान्तों में अधिक होता है।

यह रोग अचानक प्रारम्भ होता है। बुखार शीघ्र ही १०४ डिग्री तक हो जाता है। हाथ, पैर, शिर, कमर और सारे शरीर मे ढण्डों से पीटे हुए के समान बहुत दर्द होता है और अकड़न होती है। चमड़ी पर छोटे गुलाबी रंग के दाने निकल जाते हैं। नाड़ी की गति मद रहती है। बुखार की अवधि सात दिन होती है। इस अवधि को तीन भागों मे बाटते हैं। प्रारम्भ मे बुखार तेज रहता है, बीच मे ३-४ दिन साधारण बुखार रहना है और अन्त मे पुन तेज होकर उत्तर जाता है और चमड़ी पर दाने निकल आते हैं। रागी मरता नहीं।

बचने के उपाय — (१) मच्छरो से यह रोग फैलता है, अत मच्छरो का नाश करे। सीलन न रहने दे।

(२) सोते समय मग्हरी का उपयोग करे और शरीर पर सरसो का तेल लगाकर सोवे।

चिकित्सा — इस बीमारी मे विशेष औषधि देने की आवश्यकता नहीं होती। बल्कि अधिक दवा देने से नुकसान हो सकता है।

(१) वदन के दर्द को कम करने के लिए दशमूल का काढा, सोठ का चूर्ण (४ रत्ती) मिलाकर पीवे।

(२) कालीमिर्च ३ माशा और नीम के १ तोला पत्तो को पीस कर आधा सेर जल मे उबाले और ४ तोला गेष रहने पर छानकर रोगी को बार-बार पीने को दे।

(३) नीम की अन्तर-छाल का काढा पिलावे।



सन्नियात ज्वर-आमवातिक ज्वर, सन्धिक ज्वर, ह्युमेटिक फीवर

पहिचान — यह बात-तक की अस्तिता बाला सन्नियात ज्वर है। बात्यावरण और योग्यतामध्ये में यह प्राप्त द्रोग है। ३० वर्षों की आयु के बाद यह प्राप्त नहीं होता।

उसका यकायक ठण्ड और गन्धि (जोड़) में दर्द के नाम तेज बुखार (१०२-१०४ डिग्री फारून) चटार प्रारम्भ होता है। बुखार और जोड़ों का दर्द साथ ही प्रारम्भ होते हैं। यद्वा पसीना निरुद्धना, पेशाव कम आना और हट्टियों के फिनारों पर गाँठे पैदा हो जाना—उसके अन्य लक्षण हैं। उसके कारण शरीर की सारी जोड़े प्रभावित हो जाती हैं। परन्तु छुटने और कोहनी के जोड़ अधिकतर प्रभावित होते हैं। इनमें सूजन और दर्द होता है। बच्चों में उस बुखार के कारण हट्टियों के जोड़ों में सूजन प्राप्ति है, नहीं भी आती, परन्तु हृदय की पेशी में सूजन हो जाती है और उसका आकार बढ़ जाता है। हृदय के दो फल वाले दरवाजे के समीप हृदय की भीतरी तह में घास तोर में विकृति होती है। तीस साल की आयु के बाद महावमनी के दरवाजे के समीप हृदय में विकृति हो जाती है। खुन की कमी हो जाती है। इन रोग के बार-बार दौरे पड़ते हैं। जिससे रोगी बहुत दुर्बल हो जाता है। जोड़ पर सूजन और गर्मी रहती है, फिर भी चमड़ी सफेद रहती है। बुखार हमेशा रहता है।

चिकित्सा — [१] रोगी को पूर्ण विश्राम आवश्यक होता है।

[२] खाने को कुछ न दे। लघन करावे। केवल दूध दे। पचकोल [सौंठ, काली-मिर्च, पीपल, चब्य और चिवक] का चूर्ण ३ माशा १ पाव दूध में उवालकर पीने को दे, तो अच्छा रहता है।

[३] सौंठ के काढे में एरण्ड का तेल [१-२ तोला] डालकर पीवे।

[४] सूजन वाले स्थान पर बालु या नमक की पोटली से सेक करें। इससे दर्द व सूजन कम होते हैं।

[५] अमर लेल या घतूरा या निर्गुण्डी की पत्ती बाधकर, गरम कर सूजन पर बाधने से भी आराम होता है।

[६] पचमूल [वेल, अरण्डी, अरलू, गंभारी, पाढ़ल—इनकी जड़ की छाल] २ तोला, जल ३२ तोला, उबालकर बाकी ८ तोला रखे, छानकर उसमें १ माशा छोटी पीपल का चूर्ण मिलाकर पिलावे।

[७] ५ तोला कुलथी को १६ गुने जल में [८० तोला] में उबालकर १० तोला गेष रहने पर उसमें ३ माशे सौठ और थोड़ा-सा सेघा नमक मिलाकर पिलावे।



४-ग्रन्थिक ज्वर (वातालिका ज्वर : प्लेग)



पर्हचान — यह वात की अधिकता वाला त्रिदोषज ज्वर है। इसका कारण जीवाणु का सक्रमण है। ये जीवाणु चूहों के शरीर पर रहने वाले पिस्मूओं के द्वारा मनुष्य के शरीर में काटने से पहुंचते हैं। यह वीमारी बहुत धातक है और महामारी के रूप में फैलती है। अचानक बहुत तेज बुखार चढ़ता है। वीमार की आखे लाल हो जाती हैं, चेहरा फूँका हुआ मालूम पड़ता है और चिन्तित रहता है। जीभ सूखी और मैली होती है। चूहों के मरने का इतिहास मिलता है। गिलिट्या खासकर जाघो में सूज जाती है। पेशाव ललाई मिला होता है। वीमार अत्यन्त कमजोर हो जाता है, चलने में लड़खड़ाता है। स्वर बैठ जाता है और तन्द्रा रहती है।

अचन्ते के उपाय — (१) प्लेग से पीड़ित होकर चूहों के मरना प्रारम्भ होते ही प्लेग का प्रतिवधक टीका लगा लेना चाहिए।

(२) पानी, भोजन और अनाज को चूहों की पहुंच से दूर रखना चाहिए।

(३) चूहों के नाश के लिए विषैली दवाओं व पिजरों का इस्तेमाल करना चाहिए।

(४) घर का फर्श और कपड़ों को साफ रखें।

(५) घर में गूगल, राल, नीम के सूखे पत्ते, सरसों, अगर और लोवान मिलाकर धूप देना चाहिए।

चिकित्सा — (१) गिलिट्यो को पुलिट्स नाधकर पका डालें और फूटने पर वहने दें। रोगी को सान्त्वना देवें।

(२) गिलिट्यो पर कालीजोरी पीसकर गरम कर के लेप करें। अथवा राई पानी में पीसकर लेप करें।

गर्दन तोड़ बुखार-आक्रोपक ज्वर मैनिंजाईटिस

पहिचान — रोगी के थूक या नाक से खोब की विदुओं द्वारा इसके जीवाणु स्वस्थ व्यक्ति के शरीर में पहुचकर मस्तिष्क और सुषुम्ना पर चढ़ी हुई फिल्ली (मैनिजेज) में सूजन पैदा कर देता है। यह रोग ५ वर्ष से कम आयु वाले वालको में अक्सर होता है। शीत और वसन्त क्रृतु में अधिकतर होता है।

बीमारी का प्रारम्भ ग्राचानक होता है। सिर के पिछले भाग में पीड़ा, जुकाम, उल्टी होना, ज्वर (१०२-१०४ डिग्री फारून) गर्दन, छाती और कमर की पिछली पेशियों में वेदना, और जकड़न होती है। इन पेशियों के तनाव के कारण सिर और शरीर, पीछे की ओर मुड़ जाता है और गर्दन कड़ी हो जाती है। मस्तिष्क के प्रभावित होने से रोगी बकभक करता है। सिर में तेज दर्द होता है। शरीर पर लाल, काले या गुलाबी रंग के दाने निकल आते हैं। अत यह **दानेदार बुखार** कहलाता है। यह बीमारी २-४ दिन से कुछ महिनों तक रहती है। रोगी के ठीक होने पर भी कुछ आगिक निष्क्रियताएं रह जाती हैं।

अच्छने के उपाय — (१) रोगी को अस्पताल या घर में पृथक रखना चाहिए।

(२) मनुष्यों की भीड़भाड़ की जगह में इस रोग के होने की अधिक सभावना रहती है। अत भीड़ वाले स्थानों से दूर रहें।

(३) अथिक श्रम और थकान न होने दे।

चिकित्सा — (१) पेशाव लाने वाली दवाएं अधिक वरते। इसके लिए जौ-खार (१ से ३ माशा तक) गरम पानी में मिला कर दे। जल का सेवन अधिक करे।

(२) कब्ज नहीं रहने दे। (३) पूर्ण विश्राम करे। (४) केवल दूध पर रोगी को रखें। (५) दशमूल-क्वाथ (१-२ तोला) जल में उवालकर दिन में २ बार दे।

(६) योग्य चिकित्सक की सलाह ले। यह रोग धातु क होता है, अत लक्षण प्रारम्भ होते ही चिकित्सा प्रारम्भ कर देनी चाहिए।

(७) नीम की अन्तर-छाल के काढे में, काली-मिर्च का चूर्ण (४ रक्ती) मिलाकर पिलावे।

रोहिणी [डिफरेंशिया]

प्रद्विचान्न — यह अधिकतर दस-बारह वर्ष की उम्र तक के बालकों में होता है। शरीर में इसके जीवाणुओं का प्रवेश रोगी को खासते समय निकले हुए धूक की गिन्दुओं अथवा आहार के द्वारा मुख से होता है।

बालकों में यह बहुत घातक रोग है। यह कंठ में होने वाली विकृति है। साधारण बुखार (१०२ से १०३ डिग्री फारूतक), कण्ठ में सफेद फिल्ली बनना, गले की ग्रन्थियों में सूजन, गले में सूजन, अत्यन्त कमजोरी, निंगलने में कष्ट, श्वास लेने में रुकावट, नाक में सूजन और नाक से (प्राय एक नाक से) लाल रंग का खाव होता है। तालु और आख की पेशियों में लकवा हो जाता है। नाक में सूजन और पानी बहने की दशा मिलने पर तुग्न इस रोग की संभावना करनी चाहिए।

रोगी की मृत्युं सांस घुटने के कारण होती है।

खचन्ने के उपाय — (१) जिन बच्चों में यह रोग हो गया हो उनको दूसरे बच्चों से दूर रखें।

(२) अशुद्ध हवा, गदगी, अधिक गर्मी, दूषित गैस आदि का घर व विद्यालय में निवारण करना चाहिए।

(३) गले को साफ रखें।

चिकित्सा:— (१) रोगी को पूर्ण विश्राम कराये और हल्के व गर्म तरले आहार पेर रखें। सोठ डालकर उवाला हुआ दूध पीने को दे।

(२) सुहागे की खील का चूर्ण (२ रत्ती), साफ किया हुआ नौसादर (४ रत्ती) और सोठ कालीमिर्च और पीपल का चूर्ण (१ मा.) मिलाकर चटावे।

(३) साभरसीग को भस्म (४ रत्ती) शहद व अदरक का रस (१/२ तोला) मिलाकर चटावे।

शीतला, बड़ी माता या चेचक (मसूरिका-स्माल पोक्स)



पक्षिचान्न —यह रोग खासकर छोटे बालकों में, वसन्त और ग्रीष्म कृतुओं में महामारी के रूप में फैलता है। खराब हुआ पित्त और रक्त इसका कारण है। यह बालकों के लिए धातक रोग है। खासते समय निर्कली 'हुई शूक की वूंदों से इसके बाईरस शरीर में प्रवेश करते हैं। रोग का आरम्भ यकायक होता है। पहले सिर-दर्द, हाथ, पैर, पीठ और कमर में पीड़ा और कपकपी के साथ तेज बुखार (१०२-१०४ डिग्री फाठ) हो जाता है। इसके साथ जी मिच्लाना उल्टी, आक्षेप और आंखों में लालिमा पायी जाती है। तीसरे या चौथे दिन बाद बुखार कम हो जाता है और बदन पर दाने निकल आते हैं। खासकर ये दाने शरीर पर दूर के हिस्सों, जैसे, ब्रेहरा, हाथ पैर आदि पर अधिक और बीच के हिस्सों, जैसे पेट छाती, जाघ आदि पर कम निकलते हैं। वैसे सारे बदन पर दाने निकलते हैं। दाने पहले छोटे, फिर बड़े हो जाते हैं और उनमें पानी-सा द्रव भरा रहता है। पाचवे या छठे दिन इन दानों में पीप पड़ जाती है, तब बुखार फिर तेज हो जाता है। ये दाने समीप-समीप होने पर फूटने पर धाव का रूप ले लेते हैं। (कभी-कभी आतो, स्वरयत्र और इवास-नलिका में भी दाने निकल आते हैं।) अन्त में ये छाले सूख जाते हैं और खुरण्ड उतरने-लगती है। रोग की पूरी अवधि दो सप्ताह की होती है।

बचन्ने के उपाय —इस रोग का प्रसार सूखते हुए छालों से निकलने वाली खुरण्ड के कणों के वायु द्वारा शरीर में पहुँचने से होता है। अत इस बात का पूर्ण ध्यान रखें कि स्वस्थ बच्चों को रोगी बच्चे से बिल्कुल दूर रखें। रोगी की परिचर्या करने वाले व्यक्ति के सम्पर्क में भी अन्य व्यक्तियों को नहीं आना चाहिए। रोगी के शूक, नाक का स्त्राव, कफ आदि को एकत्रकर जला देना चाहिए। रोगी को तब तक अलग रखे जब तक उसके सब खुरण्ड उतरन न जाये। रोगी की मृत्यु हो जाने पर उसे जला देना चाहिए। चेचक का टीका

लगाना—छोटे बच्चों के बचाव का अच्छा उपाय है। यह प्रथा भारत में प्राचीनकाल से विभिन्न रूपों में प्रचलित रही है।

चिकित्सा:— (१) रोगी को स्वच्छ हवादार, किन्तु तेज हवा से रहित, स्थान पर पूरा आराम कराते हुए रखें।

(२) आहार में केवल दूध तथा अंगूर-घनार-मोसम्बी-आदि मीठे फलों का रस देवें।

(३) रोगी के घावों पर माक्खियों को न बैठने दे। इसके लिए सुगन्धित धूप दें और नीम के पत्तों से हवा चलायें।

(४) मुलेठी का काढ़ा पिलावे। इससे दस्त साफ आकर रोग का जोर कम हो जाता है।

(५) त्रिफला के काढ़े में शुद्ध की हुई गुगुल (४ रत्ती) डालकर सुबह शाम पिलावें। इससे व्रण जल्दी भरते हैं।

(६) वैसे इस रोग में प्रायः श्रौषधि नहीं दी जाती। गरमी की ऋतु हो तो दूध और धी देते हैं।

(७) १०-१२ दिन के बाद पानी में नीम की पत्ती उवालकर उस पानी से स्नान करवाते हैं। और वायु की शुद्धि के लिए घर में नीम की पत्तिया लटका देते हैं। इससे माक्खियाँ और च्छर भी कमरे प्रवेश नहीं करते।

(८) लाल बन्दन, अड्डसा, नागरमोथा, गिलोय और मुनक्का का क्वाथ बनाकर ठण्डाकर पिलावे। इससे दाह शान्त होता है।



ब्रच्चबड़े या छोटी माता चिकन पॉकस



परच्चिन्धान — पित्त-रक्तज्वरी मारी है, जो बालकों में अधिकतर होती है, बड़ी माता के समान ही इसमें भी लक्षण होते हैं, परन्तु उससे कुछ सौम्य स्वरूप के होते हैं।

इसकी महामारी शीत और वसन्त में फैलती है। यह रोग बड़ी माता से कम भयंकर होता है। यह रोग मंद ज्वर, बैचेनी और त्वचा पर दाने निकलने के साथ यकायक आरम्भ होता है। चेचक और इसमें यह अन्तर है कि चेचक में दाने ३ दिन बाद निकलते हैं और इसमें दाने आरम्भ में अथवा पहले दिन में ही निकल आते हैं। इसके अलावा इसके दाने शरीर के मध्यवर्ती स्थानों जैसे कंधे, छाती, पीठ, पेट और जाघ पर अधिक निकलते हैं, जबकि चेचक के दाने दूरवर्ती स्थानों — चेहरा और हाथ पैर पर, अधिक निकलते हैं। छोटी माता के दाने छोटे होते हैं और आपस में मिलते नहीं। इन दानों में आरम्भ से ही द्रव (जलीय) भरा होता है। इनमें पीप नहीं पड़ती। अन्त में दाने सूखकर पपड़िया गिरने लगती हैं। इनके गिरने पर चमड़ी पर दाग नहीं पड़ते। छोटी माता से रोगी की मृत्यु नहीं होती और टीका लगाने से इसका खास प्रतिवन्ध भी नहीं होता। अतः यह बच्चों में बार-बार हो सकता है। रोग की अवधि ८-१० दिन होती है।

आच्चने के लक्षण :— (१) रोगी से स्वस्थ बच्चों को दूर रखें।

(२) घर में स्वच्छता रखें।

चिकित्सा—बड़ी माता की चिकित्सा के समान।



बोदरी माता : खसरा - रोमांतिका



पक्षिचान्न :— यह विगड़े हुए कफ और पित्त से होता है। छोटे बच्चों में सबसे अविक होता है। यह अत्यन्त सक्रामक रोग है। इसका कारण भी वाइरस है।

प्रारम्भ में ठण्ड लगकर बुखार (- १००-१०२ तक), सिर, दर्द जुकाम, सूखो खासो, छीक आना, आख व नाक से पानी वहना, आखों का चौधिया जाना (प्रकाश सहन नहीं होना), आखों का लाल होना और गला बैठ जाना—ये लक्षण होते हैं। इस प्रकार ये लक्षण सामान्य जुकाम—खासी से मिलते जुलते हैं। मुँह के अन्दर दोनों गालों पर अगलो डाढ़ों के पास, नीले सकेद घब्बे निकल आते हैं, जिनके चारों ओर लालिमा पायी जाती है। इन घब्बों को 'कोपलिक के घब्बे' कहते हैं। यह रामान्तिका का खास लक्षण है। इनमें उल्टी नहीं होता।

चार दिन बाद चमड़ी पर उभार निकल आते हैं। ये दानों के रूप में नहीं होते, बल्कि लाल चक्कतों के रूप में होते हैं। इनमें खुजली और जलन होती है। सबसे पहले ये चक्कते कानों के पीछे और माथे के ऊपरी भाग में निकलते हैं और लगभग सारे चेहरे में छा जाते हैं। इन चक्कतों के निकलने पर बुखार कम हो जाता है, परं फिर एक दिन बाद बढ़ जाता है (१०३-१०४ डि फा तक)। इस समय रोगी की सम्भाल ठीक नहीं रहने पर इवसनक ज्वर (निमोनिया), कुकुर खासी राजयक्षमा, अतिसार आदि भयकर विकार हो जाते हैं।

७ से ९ दिन के बाद में चक्कते मुरझा जाते हैं और गोगो ठीक हो जाता है। रोग भयकर होने पर २-३ सप्ताह तक चलता है।

अच्छान्नों के उपाय — (१) रोग-ग्रस्त रोगी से स्वस्थ बच्चों को दूर रखें।

(२) गला समफ रखें और ठण्ड से बचें।

चिकित्सा -- (१) रोगी को गरम कपड़े आँढ़ने

और विछाने के लिए देवे

(२) गरम तरल चीजे रोग के प्रारम्भ में दे, इससे दाने व
चकत्ते जल्दी निकल आते हैं ।

(३) बड़ी माता के समान चिकित्सा करे ।



विषम ज्वर (मलेरिया)



(प्रायः यह बुखार ठण्ड लगकर चटना है, अतः "शोत-ज्वर" भी कहलाता है।)

पहिचान — जो बुखार अनियमित समय में हो, कभी सरदी के साथ और कभी गरमी के साथ हो, कभी अधिक और कभी कम हो, उसे 'विषम-ज्वर' कहते हैं। उसके पात्र भेद हैं—

(१) खन्त्तन्त-ज्वर — यह लगातार सात दिन, दस दिन या बारह दिन बना रहता है।

(२) खन्त्तन्त-ज्वर — यह बुखार सुबह चढ़कर शाम को उत्तर जाता है और रात को चढ़कर सुबह उत्तर जाता है अर्थात् दिन रात में दो बार चढ़ता और उत्तर जाता है।

(३) चूल्हीर्णक (चिजारा) — यह दो दिन छोड़कर तीसरे दिन फिर चढ़ता है।

(४) अन्यंद्वयु (स्कांतरा) — यह एक दिन छोड़कर चढ़ता है।

(५) चूल्हीर्णक [चौथिया] यह तीन दिन छोड़कर चौथे दिन फिर चढ़ता है।

आजकल कहा जाने वाला 'मलेरिया' बुखार भी एक प्रकार का विषम-ज्वर ही है। जो मलेरिया के खास जीवगुणों के कारण होता है। यह जीवाणु 'मलेरिया पराश्रयी' कहलाते हैं। इनका शरीर में प्रवेश एनोफिलीज नामक खास प्रकार के मादा मच्छरों के काटने से होता है।

मलेरिया में सिर दर्द होना, जी मिचलाना, उल्टी होना, सर्दी लगकर और कपकपी होना तेज बुखार चढना, बुखार उत्तरने के समय पसीना आना—ये मुख्य लक्षण होते हैं। बुखार का बारबार आना इसकी विशेषता है। बारबार बुखार आने के कारण खून की कमी

और कमजोरी हो जाती है और यकृत तथा तिळी बढ़ जाते हैं। ऐलो-पेथी में 'कुनीन' इसकी सबसे उत्तम दवा है।

बच्चनों के उपाय — [१] मच्छरी का नाश करे। सीलन वाले स्थानों को खुश्क कर दे।

[२] रहने के स्थान में गुगल, राई, नीम के पत्ते, अगर और राल का धूप देवे।

[३] गरीर पर सोने से पहले सरसों का तेल लगावे।

चिकित्सा — [१] दाढ़ हल्दी २ तोला को कुचल कर १६ गुने जल में उबालकर उसे हिस्सा शेष रहने पर छानकर पिलावे।

काली-मिर्च को तुलली के पत्तों के रस की सात बार भावना देवे और मटर के बराबर गोलिया बना ले। १-१ गोली गरम पानी के साथ बुखार आने से ४ घण्टे पहले १-१ घन्टे के अन्दर से देवे अथवा ११ तुलसी के पत्ते और ११ काली मिर्च बुखार चढ़कर उतरने पर देवे।

[३] त्रिफला के ब्वाथ में गुड़ मिलाकर पीवे।

[४] कुछ भुने हुए श्याह जीरे का चूर्ण ३ माशा गुड़ १/२ तो० मिलाकर सुबह-गाम गरम पानी से लेवे।

[५] फुलाई हुई फिटकड़ी का चूर्ण ५ रत्ती मिश्री १ माशा मिलाकर बुखार आने से पहले ३-४ बार देने से बुखार नहीं चढ़ता।

[६] हरड़ का चूर्ण ६ माशा—१ तोला शहद से चटावे। ●

काला अजार, काल-ज्वर, लाधरक ज्वर ।

पहिचान — यह ग्रासाम, वगाल, विहार, उडीमा और उत्तर प्रदेश के पूर्वी भागों तथा मद्रास के कुछ भाग में मिलता है। यह एक प्रकार की मक्खी के काटने ने उत्पन्न होता है।

इसमें अनियमित बुखार (दिन में दो बार चटने और उत्तरने वाला), खून की कमी, यकृत और प्लीहा का बढ़ जाना, खून बहने की प्रवृत्ति, त्वचा में कालापन, पेट की मिराओं का फ़लकर टेटा हो जाना, दुर्बलता और कृशता, लम्बी हड्डियों में पीड़ा—ये लक्षण होते हैं। इसमें भूख ठीक लगती है और रोगी वर्षों तक रोग से पीटित रहने पर भी अपना काम करता रहता है।

बचाने के उपाय:— मक्खी से बचने के लिए घर में अच्छी तरह से सफाई रखें। रात्रि में सोने के लिए मधहरी का उपयोग करें। रहने के कमरे में प्रकाश का अच्छा प्रबन्ध हो तथा सीलन न रहे, इसका उपाय करें। बदन पर सरसों का तेल लगावें तथा विस्तर पर कपूर छिड़के—इससे मक्खिया समीप नहीं आती।

चिकित्सा — (१) नीलाजन ($1/2$ रत्ती) की मात्रा में, कालमेघ की पत्ती के रस या कवाथ में शहद मिलाकर देवें। यही इसकी सर्वोत्तम दवा है।

(२) छोटी पीपल का चूर्ण 4 रत्ती, शहद के साथ चाटे।

(३) बढ़े हुए यकृत और प्लीहा पर सहिजन की छाल को गौ-मूत्र में पीसकर गरम-गरम लेप करें।

(४) पिपली का चूर्ण 4 रत्ती से 1 मात्रा, दूध में उबालकर पीने को देवें।



लू लगना [अंशुघात, सन स्ट्रोक]

पहिचान — गरमी के दिनों में जब वायु में नमी अधिक होती है और पसीना सूख नहीं पाता, तब शरीर का ताप बढ़ जाने से, यह वीमारी पैदा हो जाती है कम पानी पीना और बन्द हवा के स्थान में देर तक काम करने से यह दशा शीघ्र पैदा होती है। यह रोग अचानक प्रारम्भ होता है। तेज बुखार होकर बेहोशी हो जाती है। इसको दो अवस्थाएँ मिलती हैं —

साधारण दशा — अधिक समय तक गर्म स्थान में रहने से यह दशा पैदा होती है। बुखार १०२-१०३ डिं, बमन, चक्कर, सिर में दर्द, अजीर्ण, कठज, यकृत की वृद्धि, कमजोरी, नाड़ी की तेज गति, प्यास, पसीना नहीं आना, बैचेनी आदि लक्षण होते हैं।

(२) **तीव्र दशा** — इस दशा को ही 'लू लगना' कहते हैं। अकस्मात् तेज बुखार (१०५-११२ डिंफा०) चढ़कर बेहोशी हो जाती है। आक्षेप (हाथ पैर में झटके आना,) वक्खक करना और पेशियों का कड़ा होना, चेहरा व आखों का लाल होना, पसीना न आना ये लक्षण पैदा होते हैं। यदि ठीक से और समय पर चिकित्सा नहीं हो पायी तो नाड़ी की क्षीणता होकर सास धुटकर मृत्यु हो जाती है।

(१) **बचने के उपाय** — तेज गर्मी में बाहर नहीं निकलो। (२) पानो पर्याप्त मात्रा में पीये (३) गर्मी में बन्द स्थानों पर अधिक समय तक काम नहीं करे। (४) गर्मियों में प्याज, इमली और कच्चे आम के पन्ने का पीना हितकर होता है।

(१) **चिकित्सा** — वीमारी के कंपडे उतारकर, पखे की हवा दे और ठण्डक पहुचावे। सिर पर वर्फ की थैली या पानी की (ठन्डे पानी की) पट्टिया रखे। रोगी पर वर्फ के ठन्डे पानी में, चढ़दर निचोड़कर ओढ़ावे। ऐसा तब तक करते रहे जब तक बुखार १०२ डिं फा० तक न आ जाय।

(२) चन्दन जल में घिसकर पिलावे।

(३) कच्चे आम को बफाकर उसका पना बनाकर पिलावे।

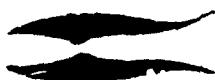
(४) प्याज का रस निकालकर शरीर पर मले।

(५) इमली को गर्म राख में भूनकर, उसके गूदे को जल में घोलकर शक्कर मिलाकर पिलावे।



पेट की बीमारियाँ

अग्निमांद्य और अजीर्ण
भूख न लगना और बदहजमी



पहिचान — खाये पीये पदार्थों को पवाने और उसका रस बनाने का काम पेट की अग्नि करती है। किन्तु वद परहेजी से वह अग्नि विकृत हो जाती है तब (१) अग्नि मद होना, (२) अग्नि तेज होना और (३) अग्नि विषम होना, यह तीन विकार पैदा होते हैं। अग्नि मद होने पर खाया पीया ठीक से पचता नहीं है और तब आम अजीर्ण हो जाता है। इसमें खाया पीया न पचना, कच्चे डकार आना, मुह में पानी भरना, भूख नहीं लगना, खाने में रुचि न होना, उवकाई आना और अन्य कफ के लक्षण पैदा होते हैं। इसमें कफ की अधिकता होती है।

तेज अग्नि पित्त से होती है। इसमें 'विदग्धाजीर्ण' हो जाता है विदग्धाजीर्ण में रोगी जितना भी खाता है, पचा लेता है बल्कि यो कहना चाहिए कि इसका खाया पीया जल जाता है जैसे तेज आँच पर रोटी सेकने से रोटा पकने के बजाय जल जाती है। इसी प्रकार इसमें भी खाया पीया भोजन क्रम से पकता नहीं है। इसमें रोगी को खट्टे जले डकार आते हैं, शरीर में जलन होती है। रस ठीक नहीं बनता और शरीर में बल नहीं आता है तथा पित्त के अन्य लक्षण होते हैं।

विषमाग्नि वायु से होती है। इसमें विष्टव्ध अजीर्ण हो जाता है इस अजीर्ण में कभी भूख लगती है कभी नहीं लगती। कव्ज रहती है शरीर रुखा और तेज रहित हो जाता है। वायु के अन्य विकार होते हैं।

इस प्रकार अग्नि की यह तीनों विकृतियां (मन्दता, तीक्ष्णता, विषमता,) को प्राचीन वैद्यो ने अग्निमाद्य शब्द से कहा है शरीर में होने वाले प्रायः सब शरीरिक या निज रोगों का मुख्य हेतु (विशेषकर पेट सम्बन्धित रोगों का) अग्निमाद्य ही होता है ।

चिकित्सा — (१) भोजन से पहले अदरक की चटनी में नमक, नीम्बू, का रस और भूना जीरा मिलाकर खाने से खूब खूब लगती है ।

(२) काला नमक, सोठ, हरड़, छोटी पीपल और निशौथ को वरावर लेकर कपड़-छान चूर्ण बनाकर रख ले । ६ माशा गरम पानी के साथ लेवे, इसे 'पञ्चसम' चूर्ण कहते हैं । इसके सेवन से शूल, बवासीर अफारा, मंदाग्नि और अजीर्ण रोग दूर होते हैं ।

(३) हरड़, पीपल और सेंधा नमक का चूर्ण बनाकर ३ माशा गरम जल से खाने से अजीर्ण दूर होता है ।

(४) सोठ, पीपल, पीपलामूल, चव, चित्रक की जड़ की छाल, इनका चूर्ण बनाकर ३ से ४ माशे मात्रा में गरम पानी के साथ लेना चाहिए । इससे वायु गोला, मदाग्नि, कफ, अरुचि और मग्नहणी आदि रोग नष्ट होते हैं । यह चूर्ण अच्छा दीपन और पाचन है ।

(५) हरड़, वहेड़ा, आवला, चव और पीपल इन पाचों को समान भाग में लेकर ३ से ४ माशा की मात्रा लेकर शहद में चाटे इससे ज्वर ब्वास, कास, और मदाग्नि दूर होती है ।

(६) **हिंगबल्टक चूर्सर्ग** — सोठ, कालीमिर्च पीपल, सेवानमक, स्याह जीरा सफेद जीरा, अजमोद-प्रत्येक १-१ भाग धी में भूनी हुई हीग आठवा भाग । सबका महीन चूर्ण कर मिलाले । ३ माशा की मात्रा में भोजन के समय पहले ग्रास में धी के साथ मिलाकर सेवन करे पेट की वायु, डकारे आना, अजीर्ण, मदाग्नि आदि रोग शान्त होते हैं ।



अरुचि (भोजन करने की इच्छा न होना)



पहिचानः—वहूत खाने से, भारी पदार्थ खाने से, भोजन के ऊपर भोजन करने से, नरम-खखत, समय-कुसमय में भोजन करने से 'अरुचि' रोग हो जाता है ।

इसमें स्वादिष्ट भोजन भी मुह में रखने से अच्छा नहीं लगता, इसे 'अरुचि' या 'अरोचक' कहते हैं ।

जब मन से सोचकर, देखकर और सुनकर ही भोजन की इच्छा नहीं होती तो उसे 'भक्त द्वेष' (खाने से द्वेष) रोग कहते हैं ।

लक्षण — शरीर में जलन होती है, शरीर सूखता है, प्यास लगती है, खाने में बिल्कुल रुचि नहीं होती, शरीर में पीड़ा होती है, हृदय में भी पीड़ा होती है । ये अरुचि के लक्षण हैं ।

चिकित्सा —(१) सोठ, काली मिर्च, पीपल हरड, बहेडा, आँखला और हल्दी का चूर्ण ३ माशे लेकर गहद के साथ सात दिन तक चाटे । इससे अजीर्ण और अरुचि दूर होते हैं ।

(२) पीपल १०० नग, काली मिर्च १०० नग और मिश्री ४ तो ० मिलाकर चूर्ण बनाकर रखले । २-३ माशे प्रतिदिन सुबह खावे ।

(३) अदरख का रस ३ माशा, नीबू का रस ३ माशा, सेधा नमक १ माशा मिलाकर पीवे ।

(४) नीबू को, केशर को, थोड़ा सेधा नमक और कालीमिर्च के साथ मिलाकर मुँह में चलाते हुए खावे ।



कै होना, उलटी होना (वोमिंग)

पहिचान — अति चिकने, पतले, अति नमकीन पदार्थ खाने से, बहुत भोजन नहरने में, वेवक्त भोजन करने से, भय से, यकावट से, घबराहट से, पेट में क्रिमि पड़ने से, अजीर्ण से, ग दी और वदबूदार वस्तुओं को देखने से और सूखने से, स्त्रियों में गर्भ धारणा हो जाने से, घुणा और नफरत पैदा करने वाले पदार्थ देखने से, खाने से सूखने से, आमाशय में उभड़ा हुआ दोष ऊपर आकर मुह को भरता हुआ और अगों को पीड़ा पहुँचाता हुआ, खाए हुए अन्नादि को निकालता है, उसे 'उलटी' या 'छद्दि' कहते हैं।

चिकित्सा — (१) १ तोला धृत के साथ १ माशा सेंधा नमक मिलाकर थोड़ा-थोड़ा चवाये।

(२) जीरा, खाड़, सेधा नमक, काली मिर्च—सबको वरावर लेकर चूर्ण बनावे। ६ माझे मात्रा में जल के साथ खावे।

(३) गिलोय का काढा बनाकर शहद मिलाकर पीवे।

(४) पीपल वृक्ष की छाल को जलाकर राख करले, फिर पानी में धोलकर नितरने रख दे, फिर नितरा हुआ पानी रोगी को पीने को दें।

(५) आवला १ तोला, मुनक्का १ तोला, दोनों को ८ तोला पानी में, पीस छानकर उसमें २ तोला मिश्री और १ तोला शहद मिलाकर पीने को दे। इसे धूट-धूट कई बार पीवे।

(६) पित्त-पापडे का कवाथ बनाकर उसमें १ तोला शहद मिलाकर कई बार पीये।





प्रहिचान — पेट की अग्नि मंद होने पर अनेक प्रकार की वीमारिया हो जाती है। उनमें 'दस्ते लगना' सबसे मुख्य है। अग्निमांद्य के कारण पेट में बढ़ा हुआ जलीय धातु मल (टट्टी) के साथ मिलकर, अपान वायु से ढकेला जाकर गुदामार्ग से वार-वार बाहर निकलता है। अधिक मात्रा में और बार-बार द्रव मिश्रित [पतले] मल का निकलना 'अतिसार' कहलाता है। बोलचाल में इसे 'दस्ते लगना' कहते हैं।

बहुत भारी, चिकनी और रुखी वस्तुओं को अधिक खाने से, बहुत अधिक भोजन करने से, शराब पीने से, गदा पानी पीने से, बहुत देर तक पानी में नहाने से, तैरने से, मौसम बदलने से, टट्टी और पेशाव की हाजत को रोकने से, पेट में क्रिमि हो जाने से, वद-परहेजी से, विष के जाने से, भय से, शोक से, यह रोग [अतिसार] पैदा होती है। [अतिसार बार-बार पतली दस्त आना]।

चिकित्सा — अतिसार की चिकित्सा में सबसे पहले इस बात का पता लगाना चाहिए कि जो दस्त आ रहे हैं उनमें कच्चा [आम] मल निकल रहा है अथवा पका हुआ। यदि कच्चा मल निकल रहा हो तो लघन करावे और उसे पकाने के लिए दवा देनी चाहिए तथा यदि पका हुआ मल निकल रहा हो तो उसे रोकने की दवा देनी चाहिए। कच्चे मल को पहले ही रोकने की दवा देने से आफरा, गुल्म, सूजन आदि रोग पैदा हो जाते हैं। थोड़ी-थोड़ी मात्रा में रुक-रुककर और पीड़ा के साथ दस्त हो रहे हो तो हरड़ का चूर्ण ३ माशा और पीपल का चूर्ण १ माशा मिलाकर दिन में ३-४ बार गरम पानी से ले।

आम और पक्व मल की प्रहिचान —

दस्त में कच्चा या पका मल जा रहा है, इसकी पहिचान इस प्रकार है। कच्चा मल पानी में झूब जाता है दुर्गन्धियुक्त, छिछड़ेदार होता है, पीड़ा (दर्द या ऐठन) के साथ निकलता है, एकएक कर या

कव्य होकर निकलता है, शरीर में भीरपन जकड़ाहट पेट में गुडगुड़ाहट आफरा, मु ह मे पानी आना आदि लक्षण होते हैं। इनसे विपरित लक्षण हो तो पका हुआ मल समझना चाहिए। नीचे कुछ सामान्य योग देते हैं, जो दोनों प्रकार दशाओं में काम आते हैं।

(१) उवाला हुआ जल पीने को दें। रोटी आदि खाने को न दें। खिड़ी, दही, चावल या केवल छाछ पिलावे। (भूना जीरा व नण्क मिलाकर)।

(२) धनिया, सोठ, नागरमोथा, सुगन्ध वाला खस और कच्चे बैल की गिरी, समान मात्रा मे लेकर जी कूट कर लेवे। इसमें से १-२ तोला लेकर उने जल मे उवाले शेष चौथाई रहने पर छानकर पिलावे (शास्त्र में इसे “धान्यपञ्चक व्याथ” कहते हैं। अतिसार की उत्तम दवा है - पैतिक और रक्तज अतिसार में सोठ को छोड़कर केवल चार चीजों का व्याथ बना कर देवे।

(३) पक्व मल वाले अतिसार मे — कुड़े की छाल का चूर्ण ३ से ६ माशा की मात्रा मे दही से चटावे,

(४) अतीस का चूर्ण ३ माशा शहद से चटावे।

(५) सोठ और जायफल को प्रत्येक (१ से ३ मां० की मात्रा में) पानी के साथ स्वच्छ पत्थर पर धिमकर चटावे।

(६) दस्त में खून जा रहा हो तो नागकेशर का चूर्ण ३ मां०, जल के साथ देवे।

(७) अतिसार के साथ सूजन भी हो तो नमक बन्द कर दे।



पैचिश, प्रवाहिका डिसेम्टरी



पहिंचान्न — जब दस्त में बहुत जोर करने पर भी थोड़ा-थोड़ा मल अथवा आव (आम) युक्त मल निकले, पेट में ऐठन के साथ बहुत बार दस्त जाना पड़ता है, उसे 'पैचिश' या प्रवाहिका कहते हैं यह दो प्रकार की होती है एक जिसमें मल के साथ आँव बहुत जाती है दूसरी, जिसमें आव के साथ खून भी गिरता है ।

चिकित्सा — रोगी को रोटी आदि भारी चीज खाने को नहीं दे । केवल चावल खिचड़ी दही छाछ पर रखें ।

(२) यदि रोगी को पेट में भारीपन, रह रहकर दर्द, होता हो तथता दस्त बहुत कम और ऐठन अधिक हो तो समझना चाहिए आव अधिक जमा हुआ है और ग्रातो में चिपका हुआ है । उसके सुदृढ़ जम गए हैं । ऐसी दशा में प्रात काल रोगी के वय और बल को ध्यान में रख कर १/२ से २ तां० एरण्ड का तेल को गरम दूब या गरम पानी में फेटकर (हिला मिलाकर) पिलावें । इससे बहुत सा आव निकल जाता है और शेष आव को पाचक औपचि देकर ठीक कर सकते हैं ।

(३) यदि दुर्बल और सुकुमार हो तो ईसवगोल की भूसी ३-६ माशा पानी में भिगोकर फुलाकर फिर पानी के साथ देवें । विना भिगोये भी दे सकते हैं इससे आव निकलने में मदद मिलती है ।

(४) आम के सुदृढ़ निकल जाने पर भूनी हुई सौफ और कच्ची सौफ वरावर लेकर उसमें दोनों के वरावर शक्कर मिलाकर चूर्ण बना लेवें । ३-४ माशा उबले हुए जल के साथ, दिन में ३-४ बार देवें ।

(५) वेल की गिरी, सोठ, छोटी पीपल, समान भाग लेकर चूर्ण बनावें । ३ माशा चूर्ण जल के साथ देवें ।

(६) कूड़े की छाल के काढे में शहद मिलाकर पीने से खून के दस्त ठीक हो जाते हैं ।

(७) पुरानी पेशिच में पके हुए वेल के फल का शर्वत बहुत लाभ करता है ।

(८) कूड़ा की छाल या इन्द्रजौ अतीस, वेलगिरी, नेत्र वाला और नागरमोथा- पूनको समभाग लेकर काढ़ा बनाकर पीने से आँव, पेट का दर्द और दस्ते ठीक होते हैं ।



ग्रहणी और संग्रहणी



प्राक्तिच्यान्तः— अतिसार रोग के मिट जाने के बाद

जिन मन्द रहने पर यदि मनुष्य कडवे, कपैले, चरपरे, ठण्डे, अति रुखे और चिकने (तलेपदार्थ) पदार्थों का सेवन करता है अथवा मात्रा से अधिक भोजन करता है, तो उसकी पाचन शक्ति दुर्बल होकर, आहार को पचाने और शोषण करने वाली ग्रहणी कला खराब हो जाती है। विना अतिसार हुए भी व्यक्ति लगातार बद-परहेजी करता है, तो अग्रिन दुर्बल होकर ग्रहणीकला खराब हो जाती है।

इस रोग में खाये-पीये पदार्थों अक्सर कच्चे ही मल के रास्ते निकल जाते हैं और कभी-कभी पका हुआ मल (वंधा हुआ) पीड़ा के साथ बाहर निकलता है। दिन में कई बार दस्त होते हैं। पेट में गुडगुड़ाहट, जलन, कच्चे पक्के डकार आते हैं, शरीर में आलस्य रहता है, बल और क्षीण हो जाता है। प्यास लगती है और खाया-पीया बड़ी देर से पचता है।

संग्रहणी में कभी पतला कभी गोढ़ा, ठण्डा चिकना, आम मिला हुआ, लेसदार, बहुत अधिक मात्रा में और आवाज और दर्द के साथ निकलता है। पेट में गुडगुड़ाहट, कमर में दर्द होता है हाथ पाव में झूंजन आती है। आलस्य रहता है और शरीर ढीला पड़ जाता है। इस दिन, पन्द्रह दिन और महिने भर बाद रोग फिर हो जाता है। इसी एकार बार-बार होता रहता है और चिरकाल तक पीछा नहीं छोड़ता है। उसे संग्रहणी (संग्रह-ग्रहणी) कहते हैं। यह रोग कष्टसाध्य है और इसमें आम और वायु की प्रधानता रहती है। इसकी चिकित्सा भी कठिन है। क्योंकि दस या पन्द्रह दिन बाद होने के कारण रोगी जान नहीं पाता कि उसे कोई बीमारी है। भोजन के बाद दस्त होना, खून की कमी, मुँह में छाने होना, कमर-दर्द, शरीर में रुखापन और कमजोरी इस रोग के खास परिणाम हैं।

चिकित्सा—विशेष—ग्रहणी रोग में अजीर्ण के समान चिकित्सा की जाती है और अतिसार के समान ही मल के आम और पक्के होने का निर्णय किया जाता है। आम मल होने पर

लंघन और दीपन-पाचन औपचि दी जाती है। पकवा मल होने पर
दस्त रोकने वाली दवा' दी जाती है।

(१) रोटी आदि कठिन पदार्थ खाने को न दें। चावल,
खिचडी, दूध, फलों का रस और छाछ, दही देना चाहिए।

ग्रहणी-रोग में छाछ का सेवन बहुत हितकर है।

(२) छोटी पीपल, काली मिर्च, सोंठ, हींग, काला व श्वेत
जीरा, सेवा नमक, अजवाइन इनका चूर्ण बनाकर १ से ३ माशा गरम
पानी से देवे।

(३) सोंठ, अतीस, नागरमोथा, का काढ़ा पिलावे।

(४) वेलगिरि का चूर्ण एक माशा, सोंठ का चूर्ण १ माशा और
गुड़ दो माशा मिलाकर भोजन के बाद जल के साथ दे दे।



हैजा : विसूचिका-कोलेरा

पहिचान — यह रोग खाने पीने की गडवडी और

पेट की खराबी से होता है। इसमें बहुत अधिक दस्ते लगना (पतली पानी जैसी), उल्टी होना, पेट में दर्द-ऐंठन, कम्पन, चक्कर आना, बेहोशी, जलन होना, प्यास लगना और जभाई आना, शरीर का तेज नष्ट होना, सिर और हृदय प्रदेश में बेदना होना आदि लक्षण होते हैं। रोग बढ़ जाने पर नीद नहीं आती, बेचैनी रहती है, पेशाव रुक जाता है, तेज कम्पकपी होती है, और बेहोशी हो जाती है। दात औठ, और नख नोले पड़ जाते हैं। आखें भीतर धस जाती है, जोड़ ढीले पड़ जाते हैं और स्वर मद पड़ जाता है। कभी-कभी यह रोग मारक के रूप में फैलता है। और तीव्र सक्रामक है।

बचनों के उपाय — कच्चे, सडेंगले खाद्य पदार्थ और फल सविजयों को न खावे। वाजार की मिठाई आदि न खावे। पानी उबालकर पीवे। रात का जागना, मादक चौजों का सेवन न करें। ताजे फलों व सविजयों को उबले जल से धोकर काम में लें। भोजन ताजा, हल्का और गरम गरे। अजीर्ण न होने दे।

रोगी का मल मूत्र और उल्टों को जमीन में गढ़ा खोदकर गाड़ देवे या जला देवे। कपड़ों को भो उबलते जल में डाले।

चिकित्सा — रोगी को खाने को कुछ नहीं दे। पीने के लिए लौग डालकर उबाला हुआ पानी, सोफ का अर्क, पुदीने का अर्क, प्याज का रस (२ से ६ तोला तक) कपूर का जल (कपूर ५ तोला जल ३० सेर मिलाकर सात दिन रख, वाद में छानकर काम में लेवे)

(२) कर्पूर रधारा (देशी कपूर, पौदीने का सत्त्व और अजवायन का सत्त्व, तीनों वरावर तेकर एक में मिलाकर रख ले) २-२ बूँद शक्कर या पताशे में डालकर खिलावे। इससे दस्ते, उल्टी और पेट का दर्द बन्द होता है।

(३) पेशाव रुक गया हो तो कलमी शोरा को पानी में घोल कर लेवे । इसमें वस्त्र भिगो कर पेटू पर रखना चाहिए ।

(४) लहसुन, जीरा, सेधा नमक, गवक, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और भूना हुई हीग-इन आठ चीजों को समान भाग में लेकर नीबू के रस के साथ घोटकर चने के बराबर गालियाँ बना ले । २-५ गोली, एक बार में दिन में २-३ बार जल के साथ देवे । (वैद्यजीवन नामक ग्रन्थ में यह योग 'लशुनादिवटी' नाम से दी हुई है ।)

(५) काला नमक, हरड़, पीपल का ढूर्ण ३ मात्रा, गरम जल से देवे ।



शूल रोग (पेट का दर्द)

पक्षिचान्तः :— तेज चुभन जैसी वेदना को 'शूल' कहते हैं। सासतोर से पेट और छाती में होने वाले इस प्रकार के दर्द 'शूल' के नाम से जाने जाते हैं।

शूल का मुख्य कारण वायु होता है।

चिकित्सा :— (१) सभी प्रकार के शूल में गर्म जल की बोतल या रवर की थैली से सेरूना अथवा गर्म पानी में तारपीन का तेल डालकर उसमें तौलिया भिगोकर उद्दर पर सोंकना चाहिए।

(२) इशमूल के काढे में एरण्ड का तेल, हीग और काला नमक मिलाकर पिलावें।

(३) एरण्ड की जड़ की छाल २ तोला पौर सोठ १/२ तोला नैकर, उसका काढा बनावें। उसमें हीग १/२ रत्ती और काला नमक ४ रत्ती मिलाकर पिलावें। इसमें पेट का दर्द ठीक होता है।

(४) शूल के रोगी को परिश्रम, दालों का सेवन, शराब पीना, मिर्च मसाले और तले पदार्थ छोड़ देना चाहिए। कब्ज हो तो जुलाव लेवें। इसके लिए एरण्ड का तेल १ से २ तोला गर्म जल या गर्म दूध में मिलाकर पीवें।

परिणाम शूल और अन्नद्रव शूल (गैस्ट्रिक एराड ड्यूडोनल अल्सर)



पक्षिचान्न — ये दोनों पैत्तिक शूल हैं। भोजन के पचने के समय या पच जाने पर (अर्थात् भोजन के २-३ घण्टे बाद) यदि उदर में शूल से (दर्द) होता है तो उसे— “परिणाम शूल” (भोजन के परिपाक काल में होने वाला दर्द) कहते हैं। इसमें भोजन करने से कुछ आराम मिलता है। भोजन करने के तुरन्त बादें या भोजन के पच जाने पर या खाली पेट रहने पर या आमाशय भरा रहने पर भी कभी पेट में दर्द होता है तो उसे ‘‘अन्न द्रव शूल’’ कहते हैं। इसी भोजन करने या नहीं करने से निश्चित रूप से कोई लाभ नहीं होता। परन्तु उल्टी होने पर आराम मालूम होता है।

चिकित्सा.— (१) रोगी को दूध पर रखें। रोटी, दाल और नमकीन, चरपरे पदार्थ खाने को न दें। अनार का रस और आवले का सेवन खूब करावे।

(२) शख भस्म या कौड़ी की भस्म (४ रत्ती से १ माशा) दूध के साथ, दिन में दो बार दें।

(३) नारियल का जल पिलावे।

(४) कब्ज हो तो—हरड़, मुनक्का और अमलताश का काढ़ा पिलावे।

(५) आंवला, मुलेठी, शतावरी और मिश्री-का चूरां ३-६ माशा दूध के साथ दें।

(६) मीठा सोढा (३-६ माशा) पानी में घोलकर पिलाने से दर्द में शान्ति मिलती है।

अम्लपित्त-हाइपर एसिडिटी



प्रक्रिया चान्तः— दूध मछली आदि विरुद्ध भोजन और जल पीने से, अधिक खट्टे, जलन करने वाले और पित्त को प्रकुपित करने वाले अल्पान सेवन करने से तथा अन्य कारणों से कुपित होकर पित्त विदग्ध प्रथाति खट्टा हो जाता है, इससे होने वाला रोग 'अम्ल-पित्त' कहलाता है।

भोजन का न पचना, विना काम किये थकावट, उबकाईयां कड़वे और खट्टे डकार, शरीर भारी होना, हृदय (नाभि से ऊपर पेट का भाग) और कण्ठ में जलन होना, अरुचि-ये अम्लपित्त के लक्षण हैं।

अम्लपित्त में कोष्ठ में पित्त का सचय बढ़ जाता है। और वह पित्त खट्टा होता है। अत जलन और खट्टी डकारे आती है।

(१) **चिकित्सा:**—खट्टी तली हुई, मिर्च मसाले दाले, बेसन, चावल और भारी चीजे न खाये। भोजन के बाद कुछ विश्राम करे। दूध का अधिक सेवन करे।

(२) आँवले के रस १ तोला में मिश्री १ तोला मिलाकर पीवें। अथवा आवले का चूर्ण ६ माशा मिश्री या शहद मिलाकर खावें। दूध पीवे।

(३) मुलेठी का चूर्ण ६ माशा शहद के साथ चाटे।

(४) चिरायता और मुलेठी को पानी में पीसकर खाँड मिलाकर पीने से अम्लपित्त दूर होता है।

(५) सफेद सर्जिकाखार (मीठा सोडा) ३ माशे १ छटांक जल में घोल ले और उसमे नीबू का रस निचोड़ लेवे। इसमें भाग उठेंगे इसे दोपहर के भोजन के बाद २-३ वजे दिन में एक बार पीना चाहिए।



वायु-गोला, बायगोला, गुलम



पहिचानः— पेट में होने वाले और उभरकर गाठ

जैसा लगने वाले उभार को 'गुलम' या 'बायगोला' कहते हैं।

हृदय और नाभी के बीच में, इधर उधर चलने वाली अथवा स्थिर रहने वाली आकार में गोल, घटने वढ़ने वाली, जो गाठ होती है, उसे गुल्म रोग कहते हैं।

दोनों पसवाडे, हृदय प्रवेश (पेट का बीच का नाभि से ऊपर का हिस्सा), नाभि (पेट का बीच का हिस्सा), वस्ति (पेट का नीचे का हिस्सा) ये गुलम के पैदा होने के स्थान हैं, अर्थात् गुलम इन्हीं पाच स्थानों में होता है।

चिकित्सा :— (१) खाने में उड्द, तली हुई चीजें, आलू, बेसन, दोले, चावल और भारी पदार्थों का सेवन न करें।

(२) एण्ड का तेल २ तोला गरम दूध में मिलाकर पीवें।

(३) त्रिफला चूर्ण ६ माशा और मिश्री ६ माशा, शहद में मिलाकर खावें।

(४) अजवायन ६ माशा, काला नमक दो माशे—इनका चूर्ण छाल के साथ मिलाकर पीवें।

(५) सोठ और पीपल का चूर्ण शहद में मिलाकर चाटें।

(६) हिंगवाष्टिक चूर्ण, हरड़ का चूर्ण और सज्जीखार (मीठा सोडा) मिलाकर ४-६ माशे मात्रा में गुनगुने जल से खावें।



बवासीर (अर्श), पाईलस



पक्षिच्यान्न — यह गुदा का रोग है। अग्नि मंद होने से अतिसार-ग्रहणी के बाद, कब्ज अधिक रहने से, और वैठक का काम करने से गुदा की शिराएँ फ़्ल आती हैं। जिससे मास के अकुरों के सप्रान उभार बन जाते हैं। उन्हें 'बवासीर' या 'मस्से' कहते हैं।

यह दो प्रकार के होते हैं। (१) सूखे और (२) गीले (इनसे रक्त बहना है) इसीलिए उनको 'खूनी बवासीर' भी कहते हैं।

चिकित्सा.— बवासीर की चिकित्सा ४ प्रकार से जाती है।

(१) दवा के द्वारा (खाने के लिए और बवासीर पर लगाने के लिए दवा का इस्तेमाल कहते हैं।)

(२) शस्त्र-चिकित्सा या चीरा-फाड़ी ((बवासीर को काटकर अलग कर देते हैं।)

(३) धार का प्रयोग (खाने और लगाने के लिए धार का प्रयोग करते हैं।)

(४) अग्निकर्म या डाम्भना-सलाई आदि गरम करके मस्सों को जला देना।

(१) **खूरखे खानी** के लिए हरड चूर्ण ३ माशा गरम जल से दिन में दो बार सुबह-शाम देवे।

(२) काली मिर्च १ भाग, सोठ २ भाग, चित्रक की जड़ की छाल ८ भाग, जमीकद (सूरण), १६ भाग, पुराना गुड सबसे दुगुना, इन सब श्रीपथि की चीजों का कपड़छन चूर्ण करके गुड में मिलाकर २-२ माशे की गोली बनाले। प्रतिदिन २ या ३ गोली जल या दूध के साथ लेवे। इससे वायु गोला, अफारा, बवासीर, मन्दाग्नि आदि रोग दूर होते हैं।

(३) बवासीर में दर्द अधिक हो रहा हो भाँग की पत्ती को पीसकर, सेंककर टिकिया बनाकर गरम-गरम मस्सों पर वाधे।

खूनी ब्रह्मासीद्य में—(१) २ तोले काले तिल
और २ तोले मक्खन मिलाकर प्रतिदिन प्रातः खावे ।

(२) नाग केशर ३ माशा, मक्खन २ तोले और मिश्री ६ माशा
मिलाकर दिन में दो बार खावे ।

सामान्य.— वासीर का खास कारण अग्निमद
होना है। इसीलिए इसमें अग्नि को बढ़ाने वाले तथा वायु को अनुलोमन
(नीचे की ओर गति) करने वाले अन्न-पान और आपव हमेशा करना
चाहिए। परहेज की चृष्ट से दफादफ का
खेवना (भूना हुआ जीरा मिलाकर)
घृतयन्त्र हितकर्द होता है।

● ●

क्रिमिरोग



पहिचान — क्रिमि या कीडे दो प्रकार के होते हैं— वाहरी और भीतरी । वाहरी कीडे चमड़ी पर जूँ, लीखो के रूप होते हैं । त्वचा की स्वच्छता रखने से वाहरी कीडे नहीं हो पाते । भीतरी कीडे आमाशय, आँतो, गुदा में पाये जाते हैं ।

मीठे खट्टे, पतले, उड्ड, नमक, पीठीवाले पदार्थ और गुड अधिक खाने से, दिन में सोने से, मास, मछली, दूध, दही, सिरका, काजी का अधिक सेवन, करने से, विरोधी पदार्थ (जैसे—दूध और मछली, दूध और मास, दूध और खटाई, दूध और उड्ड, दूध और मूली इकट्ठी खाने को 'विरुद्ध आहार' कहते हैं, इनको नहीं खाना चाहिए) अजीर्ण (वदहजमी) रहने से, पेट में कीडे पैदा हो जाते हैं । इसे "क्रिमिरोग" कहते हैं ।

क्रिमिरोग होने पर अग्नि मद पड़ जाती है, चक्कर आते हैं, बुखार और दस्ते लगती हैं, चेहरे का रंग पीला पड़ जाता है, हृदय में पीड़ा होती है, भोजन की इच्छा नहीं होती, बदन दूटता-सा मालूम होता है पेट में दर्द होता है, गुदा से खाज होती है, मुँह में वार-वार पानी भर आता है, कलेजे में खालीपन मालूम होता है और कुछ खा लेने पर शान्ति मिलती है । ये क्रिमिरोग के लक्षण हैं ।

चिकित्सा.— (१) रोगी को मीठा दलिया खिला कर जुलाव देना चाहिए । इससे कीडे बाहर आ जाते हैं ।

(२) सुबह २ तोला गुड खिलावे । १५-२० मिनट बाद ही १ से ३ माशा खुरासानी अजवायन का चूर्ण वासी पानी के साथ खिलावे । गुड के कारण एकत्रित हुए कीडे मल के साथ बाहर निकल जाते हैं । (यह योग अ कुश-मुख क्रिमियों में अधिक उपयोगी है) ।

[३] अजवायन का चूर्ण ३-६ माशा, सेधानमक १ माशा, मिलाकर खाली पेट खिलावे । इससे अजीर्ण, आमवात, शीतपित

[पित्ती उछलना] और क्रिमिरोग ठीक होते हैं । अजवायन का चूर्ण गुड़ के साथ भी खिलाने से क्रिमि दूर होते हैं ।

(४) कमीला या कपीला १ से २ माशा, गुड़ के साथ मिलाकर खाली पेट, जल से खिलावें । वच्चो के गुदा के कीड़ो में विशेष लाभप्रद है ।

[५] २ तोला गुड खिलाकर १५ मिनट बाद कमीला (कपीला) और वायरिंडग का चूर्ण [मिलित ३-६ माशा] गर्म जल से देने । यह वच्चो के सूत्र-क्रिमियो में अधिक लाभकारी है ।

[६] प्याज का रस पिलाने से भी वच्चो के चुन्ने भर जाते हैं ।

[७] पलाश [खाखरे] के बीज का चूर्ण २-३ माशे की मात्रा में, गुड के साथ मिलाकर से खिलावे । इससे गोल-कीड़ो में अच्छा लाभ होता है ।



उदावर्त-आनाह-आधमान वायु की उलटी गति होना-अफारा, पेट का फूलना



प्रहिचान्न :— टट्टी, पेशाव आदि के वेगों को रोकने से वायु की नीचे की ओर जाने वाली स्वाभाविक गति बदलकर उलटी ऊपर की ओर हो जाती है। इसे 'उदावर्त' कहते हैं। यह रोग वायु की विपरीत गति के कारण होता है। अतः इसमें पीड़ा या दर्द भी होता है।

शास्त्र में १३ प्रकार के उदावर्त गिनाये गये हैं, परन्तु व्यवहार में टट्टी, पेशाव और अपान वायु (पाद) को रोकने से होने वाले उदावर्त अधिकतर मिलते हैं। इनसे पेट में दर्द होता है, टट्टी का नियमित निकलना रुक जाता है, पेशाव रुक जाती है और डकारे अधिक आती है, भूख नहीं लगती, पेट में भारीपन मालूम पड़ता है।

आनाह-(कठज चा बछ्कोष्ठ) — यह उदावर्त के कारण होने वाली अवस्था है। इसमें मल-मूत्र अपान वायु और डकार का निकलना, विल्कुल रुक जाता है, पेट में गुडगुड शब्द भी नहीं होता। यह (आव) और मल के रुकने से होता है। वास्तव में आखों की गतिया रुक जाने से यह दशा पैदा होती है।

आधमान-(अफारा या पेट का फूलना) :— उसमें वायु रुक जाती है, पेट फूलता है, पेट में दर्द होता है, गुडगुडाहट, तेज दर्द और तनाव पाया जाता है, 'आनाह' और 'आधमान' में यह अन्तर है कि इसमें मल की रुकावट होना जरूरी नहीं है, साथ ही इससे पेट में गुडगुडाहट और उदावर्त में तेज पीड़ा होती है।

चिकित्सा — (१) इन तीनों की चिकित्सा प्रायः समान है। वायु की गति को नीचे की ओर करने के लिए पेट पर तेल की मालिश और सेक करे तथा एनिमा लगावे।

(२) निशोथ और हरड़ का चूर्ण, ३-६ माशा गरम जल से दे।

(३) धी में भूनी हुई हीग १ भाग, दूधिया वच २ भाग कुठ ४ भाग, साजीखार (मीठा सोढ़ा) ८ भाग, वायविडग १६ भाग, इनका कपड़छान चूर्ण बनावे । ३-४ माशा गरम जल से देवे । (इसे 'हिंगवादि चूर्ण' कहते हैं ।)

(४) निशोथ २ तोला, पीपल १ तोला, मिश्री ४ तोला लेकर कपड़छान कर रख ले । इसमें १/२ से १ तोला शहद के साथ खावे । इससे आनाह, शूल, उदावर्त दूर होते हैं । (यह नाराच चूर्ण कहलाता है ।)

(५) भूनी हुई हीग ४ रत्ती और काला नमक १ माशा मिलाकर गरम पानी से खावे, इससे शूल, अफारा, उदावर्त दूर होता है ।



जलंधर-जलोदर

पहिचान—पेट की गुहा मे पानी भर जाने को 'जलोदर' कहते हैं। पेट धीरे-धीरे बढ़ना चालू हो जाता है। जैसे भरी हुई मशक थलकती है, वैसे ही पेट को अ गुलि से हिलाने पर पेट थलथल करता है और अंगुलियों से बजाने पर ध्वनि होती है। पेट चिकना और तन जाता है। नाभि उभर जाती है अर्थात् गहराई नहीं रहती। खून की कमी हो जाती है। हृदय कमजोर पड़ जाता है। हाथ, पाव, मुह और पेट पर सूजन हो जाती है। भूख नहीं लगती। पेशाव कम उतरता है। श्वास चढ़ने लगता है। कव्ज रहती है।

चिकित्सा—(१) उदर रोग मे मल की अधिकता होती है। इसीलिए वार-वार जुलाव देते रहना चाहिए। इसके लिए एरण्ड का तेत त्रिफला के क्वाथ मे डालकर पीलावे या कुटकी का चूर्ण १ से ३ माशा पानी के साथ देवे। या निशोय का चूर्ण ३ से ६ माशा या त्रिफला का चूर्ण ६ माशा गरम जल से प्रतिदिन देवे।

(२) रोगी को बिना जल, बिना नमक और बिना अन्न के रखते हुए केवल गाय का या वकरी का या ऊटनी का दूध देना चाहिए, जब तक कि पेट पहले जैसा नहीं हो जाय।

(३) एक बार जलोदर होने पर इसके ठीक होने पर पुन होने का डर रहता है। इसीलिए रोगी को अच्छे होने पर भी एक साल तक परहेज से रहना चाहिए।

(४) पुनर्नवा (साठी)^१ की जड़, नीम की छाल, परवल के पत्ते, कुटकी, सोठ, गिलोय, देवदारु और हरड इन द्रव्यों को सम भाग लेकर, २ तोले मात्रा को २० तोले जल में उबालकर चौथाई शेष रहने पर छानकर शहद मिलाकर पिलावे, इससे सारे शरीर की सूजन, जलोदर, पाहू रोग ठीक होते हैं।

(५) 'सहिजने की छाल को गोमूत्र मे पीसकर उदर रोग पर लेप करे।



छाती की विमारिया

तपेदिक यद्धमा (राजयद्धमा)
(ट्यूबर क्यूलोसीस)

पहिचान — शरीर को क्षीण करने वाले रोगों में राजयक्षमा या क्षय सबसे भयकर रोग है। शरीर की धातुओं का बनने का कार्य क्षीण हो जाने से इसे 'क्षय' कहते हैं। इसमें रस रक्तादि धातु सूख जाती है इसिलए उसे शोष कहते हैं। हाथ पैर के तलुओं में जलन होती है। पसली और कधो में पीड़ा होती है। रक्त मिला हुआ कफ का वमन होता है बुखार बना रहता है स्वर बैठ जाता है क्षुद्र वास अर्थात् थोड़े परिश्रम से सास छलना, खासी, शिर में भारीपन, आखों में सफेदी माँस, खाने की इच्छा, मैथुन करने की प्रबल इच्छा होती है यह राजयक्षमा के लक्षण है छाती (फेफड़े में घाव हो जाने पर हृदय में पीड़ा, दुर्गन्धयुक्त और पूय युक्त कफ और रक्त का वमन होने लगता है। यह रोग अधिक मैथुन करने से, अधिक कसरत से तथा अनियमित भोजन करने से, मल-मूत्रवेगादि को रोकने से, ताकत से अधिक मेहनत करने से ब्रण, शोक, ज्वर से और अधिक मार्ग चलने से होता है। राजयक्षमा को तपेदिक, राजरोग और महाजनी बुखार भी कहते हैं।

चिकित्सा — (१) राजयक्षमा के रोगी के मल एवं वीर्य की रक्षा सदैव करनी चाहिए। क्योंकि इन दोनों से बल बना रहता है। यदि कब्ज भी रहे तो अजीर मुनक्का दूध में उबालकर दे। अप्लतास १ तोला क्वाथ बनाकर दे सकते हैं।

(२) भूख बढ़ाने वाली और हाजमा करने वाली दवाइयाँ

देनी चाहिए। भोजन हल्का व पौष्टिक और निवास स्थान स्वच्छ हवा दार होना चाहिए। रोगी को रोज प्रात साय ठहलने की आदत डालनी चाहिए। मांसाहारी व्यक्तियों को तीतर, मुर्गा आदि का मास और अडे खाने चाहिए। अल्प मात्रा में मद्य भोजन के बाद लेंगे।

(३) नागबला की जड़ का चूर्ण ३ से ६ माशा धी और शहद से चाटें। इसके साथ रोगी को केवल दूध भात के पथ्य पर रखो।

(४) पीपल, खाड़ और मुनक्का इन तीनों को समान भाग लेकर नित्य २-३ तोला प्रातः साय खावो। इससे तपेदिक, श्वास, कास दूर होते हैं।

(५) असगंध, पीपल, और मिश्री समान भाग में लेकर चूर्ण बनाकर ३-६ माशा शहद के साथ नित्य चाटें।

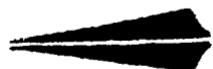
(६) शुद्ध शिलाजीत ४-८ रत्ती को दूध के अनुपान से सेवन करें।

(७) एक पाव दूध में लहसुन की ८-१० कलिया उत्त्रालकर खावें। इससे मुलेहठी चूर्ण ३ माशा मिलाकर भी ले सकते हैं।

(८) **सितोपलाचि चूर्णः**— सितोपला (मिश्री) १६ भाग, वंशलोचन ८ भाग, पीपल ४ भाग दालचीनी [पतली छाल वाली] २ भाग और छोटी इलायची के दाने १ भाग सबका महीन चूर्ण बनावें। २ से ४ माशे की मात्रा में धी और शहद से चटावें।



कास (खांसी)



पच्छिम्यान्त — धुंआ भीतर जाने से, धूल आदि भीतर जाने से, खूब कसरत करके रखा अन्न खाने से, भोजन के श्वास मार्ग में चले जाने से, मल मूत्र और छिक के वेगों को रोकने से, मार्ग की थकावट से, और चिकने भोजन करने से खांसी पैदा होती है।

खांसी दो प्रकार की होती है। (१) सूखी तथा (२) गीली। प्रायः सूखी खांसी रह रहकर चलती है और गले में खराश और चुभन होती है। कफ नहीं निकलता है। गीली खांसी में कफ गिरता है। यह प्रायः सुबह शाम चलती है। कफ गिरने से खांसी में आराम मालूम पड़ता है।

चिकित्सा — (१) पीपल, पीपलामूल, सोठ और बहेडे को सेमे भाग लेकर चूर्ण बनाकर ३ से ६ माशा चूर्ण शहद मिला कर चाटे तो इससे गीली खांसी रुकती है।

(२) काली मिर्च का चूर्ण १ माशा शहद के साथ चाटे।

(३) काली मिर्च के चूर्ण में दुगुना गुड मिलाकर गोलिया बनावे। इन गोलियों को चूसने से खांसी में आराम होता है।

(४) कटेरी के काढे में शहद मिलाकर पीना चाहिए।

(५) फुलाई हुई फिटकरी के चूर्ण ४ रत्ती में मीठा तिली का तेल मिलाकर दिन में ४ बार लेने से सूखी खांसी ३ दिन में अवश्य मिटती है।

(६) अदरक रस १/२ से १ तोले में शहद में मिलाकर चाटने से खांसी और श्वास दूर होते हैं।

(७) बहेडे को भूभल में भून लेवे। इसको मुँह में रखकर चूसने से खांसी और श्वास में लाभ होता है।

(८) हरड़ को भूभल में भून कर इसके साथ सोठ मिलाकर चूसने से खांसी दूर भागती है।

(९) सुहागे की खील का चूर्ण २-३ रत्ती शहद से चटावे।

(१०) कटेरो और अद्भुता का कोढा बनाकर उसमें शहद और पीपल का चूर्ण डालकर पीने से कफयुक्त खांसी ठीक होती है।

काली खांसी या कुकुर खांसी

पत्तिचान्न — यह वच्चो में होने वाला संक्रामक रोग है। इस रोग की उत्पत्ति 'हिमोफिल्स पट्युसिस' नामक जीवाणु के कारण होता है। ये जीवाणु रोगी के मुँह, नाक, गले में रहते हैं और छोंकते व खासते समय थूक व कफ की विदुओं द्वारा स्वस्थ वच्चो में जाते हैं।

रोग के प्रारम्भ में हल्की खांसी, गला खराब होना और साधारण बुखार होने से होता है, यह बढ़कर दो सप्ताह बाद भयंकर खांसी का रूप ले लेता है। इसके साथ जुकाम के समान लक्षण मिलते हैं— घीक आना, आखों से पानी वहना, खासी दौरे ठहर-ठहरकर आते हैं और प्रत्येक दौरा कई कई मिनट तक रहता है। खांसते हुए वच्चे का चेहरा लाल हो जाता है। इस समय 'हृप' के समान सास भीतर लेने के समय विकृत घ्वनि होती है। इसी के बाद प्राय कई हो जाती है।

इस खांसी में फेफड़ों के अन्य भयंकर रोग पैदा हो जाते हैं। यह रोग फरवरी से अप्रैल के महीनों में खासतौर से होता है। रोग की श्रवणि प्रायः दो महीने होतो है।

उच्चन्नो कै उपाय — (१) रोगी बालक को दो माह तक दूसरे बालकों से दूर रखें।

(२) वच्चो को ठण्ड से बचावें।

(३) गर्म और पौष्टिक भोजन खाना चाहिए।

(४) गले को साफ रखें।

चाकिहसा — (१) रोगी को गरम और ताजी हवा वाले वातावरण में रखना चाहिए। सीलन और ठण्ड से बचाना चाहिए।

(२) वच्चों को हल्का, जल्दी और आसानी से पचने योग्य पौष्टिक सरल भोजन देना चाहिए। दूध में उवालकर अचीर, खजूर, छुहारा और मुनक्का देना चाहिए।

(३) गोबजुवा, गुलबनपशा, मुनक्का और खूबकला मिलाकर बनाया हुआ काढ़ा पीने को दें।

(४) फुलाई हुई फिटकरी का चूर्ण २ से ३ रत्ती शहद के साथ चढ़ावें।



दमा (श्वास)

प्रक्षिप्तान्न — वायु कुपित होकर फेफड़े में रहने वाले कफ को सूखा देता है। इससे श्वास की गति में रुकावट होती है। इसको श्वास रोग कहते हैं। व्यवहार में 'तम्भक श्वास' नामक श्वास रोग अधिक मिलता है। इसे ही 'बम्भा' कहते हैं। इसमें बार-बार तेज खांसी चलती है। खासी के साथ कफ निकलता है। जब कफ खुड़क होकर गले में झड़ जाता है, तब रोगी को अधिक कष्ट होता है और जब कफ ढीला होकर निकल जाता है तब आराम मालूम होता है। सोते समय और लेटते समय खांसी और श्वास का वेग अधिक हो जाता है। रोगी लेटकर नहीं सो सकता है। उसे बैठने से आराम मालूम होता है। श्वास रुक जाता है। प्यास लगती है, आंखें चढ़ जाती हैं। मस्तिष्क पर प्रसीना आता रहता है और पीड़ा भी होती है। सारा शरीर ढीला हो जाता है। रोगी गरम चीजों को अधिक चाहता है। बरसात, सर्दी, सामने की हवा का सेवन करने से, ठण्डे और कफ करने वाली वस्तुओं के सेवन से श्वास का दौरा बढ़ जाता है।

चिकित्सा — (१) दशमूल (वेल, अरनी सोना-पाद्म, गृष्मभारी, पाड़ल) इन पांचों के मूल की छाल, छोटी कट्टरी, बड़ी कट्टरी, गोखरू सरिवत्त-और पीठवन, इनका पवाग, का काढ़ा करे। इसमें १ माशा पौहकरलूल का चूर्ण मिलाकर पीने से दमा, खासी पसली का दर्द-दूर होता है।

(२) हरड़ २ तोले के काढे में १ माशा पीपल का चूर्ण मिलाकर गरम जल से पीवे।

(३) छोटी पीपल और मेघानर्मक का चूर्ण अदरक के रस के साथ चाटें।

[४] भारती ६ माशा और सोठ १ माशा के काढे में गुड मिलाकर अर्ना चाहिये।

(५) अद्भुत के पत्तों का रस (१ से २ तोला) शहद के साथ मिलाकर पिलावे ।

(६) पुराना गुड़ १ तोला और कडुवा तेल १ तोला दोनों मिलाकर चाटने से श्वास में लाभ होता है ।

(७) पोहकर मूल का चूर्ण १ माशा, जवाक्षार १ माशा, काली मिर्च चूर्ण १ माशा गरम जल के साथ मिलाकर चाटे ।

(८) कायफल, पोहकर मूल, काकडासिंगी और पीपल का चूर्ण १-३ माशा शहद से चाटे । इससे खाँसी और दमा ठीक होते हैं ।

(९) हल्दी का चूर्ण ३ माशा, गरम जल से प्रात साय खावे; खठाई न खाए ।

(१०) आक के पत्तों की भस्म, नमक और काली मिर्च पान के रस के साथ लेवे ।

हिचकी [हिक्का]



प्राह्लिच्छान्न — अधिक भोजन से, तीक्ष्ण और चरपरे पदार्थों के खाने से, शीघ्र भोजन करने से, भारी और कब्ज करने वाले वदार्थ खाने से, मल, मूत्र के वेगों को रोकने से, शीतल भोजन करने से, अधिक व्यायाम और अधिक परिश्रम करने से, अधिक रुखे पदार्थों के खाने से, अधिक मार्ग चलने से, हिचकी शुरु हो जाती ।

चिकित्सा:—(१) सोठ १ माशा और शहद ६ माशा मिलाकर चाटने से हिचकी दूर होती है ।

(२) ६ माशा शहद, एक माशा सेघानमक, २ तोला बिजोरे या चकोतरे का रस या उसकी केशर मिलाकर चाटने से हिचकी दूर होती है । इसे दिन में ३-४ बार चाटना चाहिए ।

(३) इलायची मुँह में रखने से हिचकी दूर होती ।

(४) १ तोला तुलसी के रस में, १ माशा इलायची का चूर्ण मिलाकर पिलाने से हिचकी दूर होती है ।

(५) सेघानमक को पानी में धोल कर नाक में टपकाने से तुरन्त हिचकी बन्द होती है ।

(६) मोर के पख के चंदो से, (चमकीला भाग) की काली भस्म ३ रत्ती और पीपल का चूर्ण ३ रत्ती, शहद के साथ मिलाकर चटावें । इसे कई बार चटाना चाहिए ।

(७) नौसादर और चूने को मिलाकर सू घने से हिचकी बन्द होती है ।

(८) सास रोकर प्राणायाम करें ।

(९) जल में सोठ घिसकर सू घने से, हिचकी बन्द होती है ।

[१०] रोगी का ध्यान दूसरी ओर बदलने से, भी हिचकी बन्द होती है ।

[११] सोठ पीपल, आमला और मिश्री का चूर्ण शहद से चटावें ।



हृदय रोग



पचिचान्न :— छाती के बाएँ भाग में दोनों फेफड़ों के बीच में हृदय स्थित होता है। यह शरीर में खून का दौरा कराने वाला यन्त्र है। परिश्रम से तेज आवाज सुनने से या किसी चिन्ता में हृदय की धड़कन बढ़ जाना, छाती के बाये भाग में दर्द होना, मन की चुंचलता, नाड़ी की गति तेज व अनियमित होना और मूर्च्छा इसके लक्षण हैं। अधिक श्रम, मैथुन, रूक्ष अन्नपान, भय शोक आदि मानसिक आघात, अत्यन्त गर्मी घावि कारणों से हृदय रोग पैदा होता है। हृदय की गति अचानक रुक जाने 'हार्ट फेल' हो जाता है।

चिकित्सा :— (१) हृदयरोग की चिकित्सा योग्य चिकित्सकों से करानी चाहिए।

(२) वारहसीग या हरिण के सीग की भस्म ४ रत्ती से १ माशा मात्रा में घृत के साथ या शहद के साथ चाटे। इससे हृदयशूल मिटता है।

[३] अर्जुन की छाल का चूर्ण १ तोला, दूध एक पाव और जल एक पाव, मिलाकर मन्दाग्नि से पकावे। दूध शेष रह जाने पर धानकर मिश्री और इलायची का चूर्ण [४ रत्ती] मिलाकर पीलावे। यह हृदय की माँस पेशियों को बल देता है। और हृदयरोग में बहुत लाभकारी है।

[४] परिश्रम न करे। गर्म, नसीली और तेज वस्तुएं त्याग देवे।

[५] टहलना उत्तम व्यायाम है। पेट साफ रखे। कब्ज रहने से वेदना बढ़ती है।

[६] छाती में धड़कन और घबराहट अधिक होने पर अकीकपिष्टी या प्रवालपिष्टी ४ रत्ती, गुलकन्द या सेव के मुरब्बे के साथ देवें।

[७] पुष्करमूल का चूर्ण १ माशा, शहद के साथ चाटे। यह दर्द और घबराट को दूर करता है।

अध्याय-७

सारे शरीर में होने वाली बीमारियाँ

रक्तपित्त नाक, मुँह, कान, मूत्रमार्ग
आदि से खून गिरना

पहिचान — पित्त द्वारा रक्त खराव हो जाने पर

शरीर के किसी भी भाग से, खासकर भीतर की कोमल भिली में से चूँचू कर रक्त निकलता है। इसे 'रक्त-पित्त' कहते हैं।

यह रक्त पित्त के द्वारा खराव होने से अच्छे रक्त से भिन्न होता है। ग्रधिक समय तक धूप में धूमने से, ग्रधिक व्यायाम और परिश्रम से, अत्यन्त शोक से, मार्ग चलने से, अति मैथुन से, तीक्ष्ण गर्म चरपरे, खारे, नमकीन, खट्टे पदार्थों के ग्रधिक खाने 'रक्तपित्त' रोग होता है। यह दो प्रकार का होता है।

उर्ध्वगद रक्त-पित्त — ग्रथित नाक,

मुह, कान, आँख आदि शरीर के ऊपर के भाग से खून फूट निकलता है। उसे 'उर्ध्वगद रक्त-पित्त' कहते हैं। इसमें कफ भी मिला रहता है।

अधोगत रक्त-पित्त — अर्थात् गुदा, मुत्रे-न्द्रिय आदि शरीर के नीचे के भागों से खून फूट निकले तो इसे 'अंधोगत रक्त-पित्त' कहते हैं इसमें वायु का सयोग होता है।

चिकित्सा — (१) वकरी या गाय का दूध ठंडे जल से स्नान, ठंडी हवा, फूलों की माला पहनना, चादनी रात में बैठना पुराना चावल, गेहूँ हितकार होता है गरम और तली हुई चीजे न खावे दही, नमक, उड्ड, सरसो, बैंगन, मसाले आदि चोजे न खावे।

(२) अड्से की पत्तियों का रस या अड्से के काढे में शहद मिलाकर पिलावें

(३) ऊर्ध्वगत रक्त पित्त में पीपल की लाख का चूर्ण ३ माशा थी और शहद में मिलाकर दिन में ४ बार चटावें ।

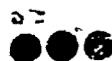
(४) ऊर्ध्वगत रक्त पित्त में मोत्र रस का चूर्ण दध के साथ दें ॥

(५) सोनागेरु १ माशा, दूब के रस में शहद मिलाकर चटावें

(६) आवले का कपड़छान चूर्ण मिश्री मिलाकर पिलावें ।

(७) मुनक्के के काढे में मिश्री मिलाकर पिलावे ॥

(८) फिटकरी के फूले के चूर्ण का नसवार लेने से नाक और मुह से आने वाला खून बढ़ होता है ।



पाण्डुरोग, खून की कमी, एनीमिया

प्रहिचान्त — प्रधिक कसरन (परिवय) और मेहुन करने से, सब प्रकार के नमक और स्टाइ प्रधिक खाने में, प्रधिक शराब पीने से मिट्टी खाने से, दिन में मीठे में, नान मिचं आदि नीदन पदार्थों का अधिक सेवन करने से टट्टी, पेयाव के बंग रोकते भै, यथा ग्रग्नि का सेवन करने से पाण्डुरोग हो जाता है।

इसमें त्वचा, (आग ती गल ही के भीतरी भिड़ी) मा, मुन और नल पाण्डु वर्ण (पकी हुई पत्तियों के समान तुच्छ पीलापन लिए हुए सफेद रंग) के हो जाते हैं, साथ ही मूजन, उट्टी बुगार, नामी सास चलना और अग्नि की मदता लदागा पाये जाते हैं।

रस से पित्त की नहायता में खून बनना है। उपर्युक्त कारणों से रस से रक्त नहीं बन पाता और बने हुए रक्त में पित्त की अधिकता होकर रक्त की कमी हो जाती है। इस प्रकार खून की कमी को पाण्डु रोग (अम्रेंजी में एनीमिया) कहते हैं। खून की कमी से चमड़ी की लालिमा और तेज कम हो जाता है। चमड़ी पीली फीकी हो जाती है। इसे ही पाण्डुरोग कहते हैं।

चिकित्सा — (१) मुनवर्ता का नित्य सेवन करें। दुध में उवालकर लेवे।

(२) गोमूत्र में भिगोकर मुखाई हुई हरउ रा नूर्ण ३ मात्रा गोमूत्र या गरम जल से सेवन करें।

(३) चित्रक, अजमोद, सेवानमक, सोठ, कालीमिचं, इन सब का नूर्ण गाय के मट्ठे के साथ पीने से पाण्डुरोग, ववासीर, मदाग्नि रोग दूर होते हैं।

(४) मण्डूर भन्म ४ रत्ती और पीपल (छोटी पीपल) का नूर्ण ४ रत्ती, मिलाकर गाय के दूध से पीवे। पाण्डुरोग और पुराना जुकाम ठीक होता है।

(५) ताज आवले का रस ५ तोला और २ तोला शहद मिलाकर पीने से पाण्डुरोग ठीक होता है।

(६) यदि मिट्टी खाने से पाण्डु हुआ हो तो जुलाव लेफर मिट्टी वाहर निकाल देनी चाहिए।

पीलिया (कामला)

पहिचानः—यह भी खून की विमारी है। खून में पित्त की अधिक मात्रा धड़ जाने से यह रोग होता है। इसमें चमड़ी, टट्टी, पेशाव और आखेर नाखून के मूल भाग पीले और लाल (हल्दी जैसे) रंग के हो जाते हैं। शरीर में जलन अधिक व कमजोरी बढ़ जाती है। और कभी-कभी थूक भी पीले रंग का आता है। हर एक चीज पीली नजर आने लगती है। मुह का स्वाद कड़वा होता है। कब्ज, उल्टी, अरोचक, बुखार, खासी, पतलीदस्त, सास फूलना, यह लक्षण होते हैं।

रोग पुराना होने पर हाथ, पैर, मुह पर सूजन हो जाती है, पीलिया के एक प्रकार में नेत्र पीले होते हैं किन्तु दस्त का रंग सफेद (मटमैला) होता है।

चिकित्सा—(१) हरड, बहेडा, आवला, गिलोय, अडूसा, कुटकी, चिरायता, नीम की भीतरी छाल को बरावर मात्रा में नेकर जो कूटकर रखें। २ तोला नेकर उगुने जल में उबालकर बौद्धाई शेप रहने पर उतारकर छानकर ठण्डा होने पर शहद मिलाकर पिलावें। इसमें पीलिया ठीक होता है।

(२) कुटकी का महीन चूर्ण बनाकर सुवह-शाम १ से ३ माशा, जल के साथ लेवें। इससे दस्त पतले होकर पीलिया ठीक हो जाता है।

(३) दालू हल्दी के काढे में नीम का रस और शहद मिलाकर चाटने से पाण्हु और कामला रोग दूर होते हैं।

(४) सोठ के चूर्ण को दूध में उबालकर पीना चाहिए।

(५) असली शुद्ध शिलाजीत व सोठ ४ रत्ती, गोमूत्र के साथ खाने से पीलिया दूर होता है।

(६) पीलिया के रोगी को दलिया या खिचड़ी ही खाने को दिये जाय। पुराने भात हरी सब्जियों का शाक, गरम दूध, नमक

मिलाई हुई द्याव्य (जो धी और चिकनाई में रहित हो) देनी चाहिए। धी विल्कुल कम देना चाहिए। तब्दी हुई चीज़, तेल, मिठां, मसाला, मछली, माँस विल्कुल ही नहीं सावें।

(७) पतली मूली का रस ४ तोला शक्कर १ तोला मिलाकर दिन में ३ बार पीवें।

(८) प्रतिदिन रात को सोते समय हरड़ का चूर्ण ६ माशा गरमे जल से लेवें।



प्लीहा (तिल्ली) बढ़ना



पेट के बाए भाग में पसलियों के नीचे तिल्ली होती है। पुराने बुखार, मलेरिया, आंत्रिक ज्वर (टाइफाइड), काला अजार, और अन्य क्षीणकारी बीमारियों के कारण तिल्ली बढ़ जाती है।

चिकित्सा:—(१) रोहिडे (रोहितक) के पेड़ की छाल का काढ़ा बनाकर जवाखार (१ माशा) मिलाकर पीवें। तथा तिल्ली की सूजन पर छाल का गरम लेप करें।

(२) जबाखार १ से ३ माशा, गोमूत्र के साथ पीवें।

(३) शंखभस्म १ माशा, शहद से सेवन करें।



यकृत 'जिगर' का बढ़ जाना

प्रह्लिच्छ्रान्तः—पेट में दाहनी और पसलियों के नीचे यकृत (जिगर) होता है। मलेस्त्रिया वुखार, पुराने वुखार, अधिक शराब पीने, पुरानी पेचिश, अन्नपान की खराबी और विष प्रभाव के कारण यकृत (जिगर) में सूजन हो जाती है। इससे शरीर में खून की कमी हो जाती है। भूख नहीं लगती। अपचन, कब्ज या दस्ते लगना, हल्का वुखार रहन और वैचेनी रहना—लक्षण होते हैं।

चिकित्सा.—(१) रोहिडे की छाल का काढा पीवे।

(२) सहिंजने और वरुण की छाल का काढा पीवे तथा इसका यकृत-प्रदेश पर लेप करे।

(३) पीपल का चूर्ण ४ रत्ती, मधु के साथ चाटे।

(४) पेट साफ रखने के लिए जुलाब देवे। यदि दस्त पतले हो तो 'धान्यपंचक द्रवाय' (जो अतिसार की चिकित्सा में बताया गया है) पिलावें।

● ●

मोटापन 'मेदोरोग'

पक्षिचान्न — इस रोग में शरीर में चर्वी का जमाव अधिक हो जाता है। व्यायाम न करने से, अधिक सोने से, चिन्ता-रहित जीवन विताने से, कफ बढ़ाने वाले अन्नपान जैसे—मीठे, चिकने और भारी पदार्थों के सेवन से चर्वी बढ़ती है। ऐसा व्यक्ति कोई काम नहीं नहीं कर सकता, थोड़े ही परिश्रम से सास फूलने लगता है। उसे भूख, प्यास और नीद ज्यादा आती है। बदन ढीला रहता है। पसीना ज्यादा आता है। पसीने में बदबू आती है। चर्वी के अभाव होने से शरीर मोटा हो जाता है। इसकी जीवन शक्ति, मौथुन शक्ति और प्रजनन शक्ति कम हो जाती है। बदन पर चमड़ी के रोग और मधुमेह आदि होने की संभावना रहती है। चर्वी का जमाव पेट, और हाथों पैरों पर अधिक होता है।

चिकित्सा — (१) शारीरिक और मानसिक श्रम करना, पर्याप्त ठहलना, शास्त्र-चिन्तन करना और रुखे अन्नपान का सेवन करना हितकार होता है। ऐसे व्यक्ति को पुराना गेहूँ और जी की रोटी खानी चाहिए।

(२) १ तोला शहद, ४ तोले गरम जल में मिलाकर प्रातः पीना चाहिए।

(३) मक्खन निकाला हुआ मट्ठा पीना चाहिए। इसमें पंच-कोल (पीपल, पीपलामूल, चब्य, न्निवक, सोठ) का चूर्ण १ से २ माशा मिलाकर पीना अच्छा है।

(४) अरणी की छाल का काढा बनाकर इसमें १ माशा शुद्ध शिलाजीत मिलाकर पीना चाहिए।

(५) पीपल का चूर्ण ४ रत्ती से १ माशा, शहद से चौटे।



प्रस्तुत्यान् — वायु से शरीर के किसी भी भाग में विकार हो सकता है। वायु का प्रकोप दो प्रकार से होता है [१] कमज़ोरी से और [२] वायु के मार्ग में रुकावट होने से। जो वायु का विकार शारीरिक कमज़ोरी से पैदा होता है उसमें श्रौपध चिकित्सा करनी पड़ती है और जो वायुका प्रकोप मार्ग की रुकावट से होता है, उसमें उपवास, हल्का भोजन, पसीना लाना ठण्डे और उष्ण दोनों प्रकार के द्रव्यों का सेवन कराया जाता है। वैसे, वायु के अनेक रोग होते हैं। यहां वायु के दो रोगों का विचार करेंगे। जो खासकर मिलते हैं।

(१) **गृध्रसी (सायटिका)**:- इसमें कुल्हे, जांघ, घुटने और पैर की एड़ी तक होता है। दर्द की शुरुआत कुल्हे के पिछले हिस्से से होकर सारे पैर में अथवा पैर के कुछ हिस्से में दर्द हो जाता है। यह दर्द सुई चुभने जैसा तीखा होता है। अकड़न, जकड़ाहट और फड़कन होती है। रोगी लगड़ाकर चलता है।

चिकित्सा — [१] छिले हुए लहसन की गुदी २ तोला, द तोला दूध और द तोला पानी मिलाकर पकावे; जब दूध शेष रह जाय तब सुवह-गाम पीने को देना चाहिए।

[२] २ तोला एरण्ड का तेल १ पाव ताजे गोमूत्र में प्रतिदिन सुबह, १ महिने तक पीवे।

[३] एरण्ड के बीज की गुदी को दूध में पकाकर, गुड़ या चीनी मिलाकर, खीर की तरह खानी चाहिए।

[४] हरसिंगार के पत्तों का रस या काढ़ा द तोला प्रतिदिन पीना चाहिये।

[५] एरण्ड की जड़ का काढ़ा बनाकर, सोंठ का चूर्ण २ माशे मिलाकर पिलाये।

[६] दशमूल या सोंठ के काढ़े में एरण्ड का तेल मिलाकर पिलावे।

[३] असगंध, विधारा और सोंठ इनको समझा चूर्ण बनाकर ३ से ६ माशा गरम दूध से सुबह शाम लेवें ।

[४] दर्द अधिक होने पर नमक की पोटली से सेंक करें ।

[५] सहिजने के छाल और पत्तों के रस को २-४ माशे मात्रा में पिलावें ।

(१०) “सोठ, सुहागा, सेधानमक, गाधी । सहिजने के रस वरिया वाधी । सत्तर शूल और अस्सी वाई । कहे धनन्तर छन में जाई । [लोकोवित] ।

(२) लकवा (पक्षाधात) : (एक अंग : हाथ पंख आदि : अथवा शरीर के आधे भाग की क्रियाशक्ति नष्ट होना)

शरीर का १/२ भाग [कप्रर से ऊपर का या नीचे का भाग या दाया या बाया आधा भाग] और सारे शरीर में क्रिया करने की शक्ति का नष्ट होना ‘लकवा’ कहलाता है । इसमें रोगी की हिलने-डुलने और चलने-फिरने की शक्ति नष्ट ही जाती है । कभी-कभी बोलने में असमर्थ रहता है । यह कभी-कभी केवल हाथ वे पैर में ही होता है ।

लकवे की चिकित्सा : [१] नेगड़ की पत्ती का रस १ तोला और शहद १ तोला मिलाकर सुबह-शाम पीवें । (२) छिलके उतारे हुए लहसन की गुदी ६ माशा और मक्खन १ तोला मिलाकर खावें अथवा लहसन की गुदी २ तोला चौगुने दूध और चौगुने पानी में ओटाकर दूध शेयर हे तब उतारकर छानकर पीलावें । (३) असगंध का चूर्ण ३ माशा दूध सो नित्य सुबह-शाम लेवें । (४) दशमूल के काढ़े में शुद्ध गुग्गल ४ रत्ती मिलाकर पीवें ।



गठिया या गठियावात-आमवात

पहिचान— इस रोग में आम और वायु दोनों बढ़े हुए रहते हैं। इसमें सब अगों की या किसी एक सघि में सूजन और पीड़ा होती है। अगों में जकड़न और भारीपन रहता है। बुखार रहता भोजन का परिपाक नहीं होता। अग्नि की मंदता और प्यास अधिक लगती है। आतों में गुडगुड़ाहट और आफरा रहता है, पेशाव अधिक आता है और नीद नहीं आती। सूजन एक जोड़ से हटकर दूसरे जोड़ में चली जाती है।

(१) **चिकित्सा** — गठिया के रोगी को पंचकोल का चूर्ण मिलाकर (पंचकोल चूर्ण २ तोला, जल २५६ तोला) उबाल-कर जब आधा शेष रहे तब उतारकर छानकर पीने को देना चाहिए।

(२) दूध में पचकोल का चूर्ण (सोठ, पीपलामूल, चव्य, चित्रक) को उबालकर देवे।

(३) सोठ का चूर्ण २-३ माशा, पुनर्नवा के काढे या गरम जल के साथ पीना चाहिए।

(४) १ छटाक गौ मूत्र में या गरम जल में १-२ तोला एरण्ड तैल मिलाकर रोगी की कई दिनों तक पिलाना चाहिए।

(५) गठिया रोग में एरण्ड तैल का उपयोग बहुत हितकार होता है। इससे कोष्ठ शुद्धि होती है और आम निकल जाता है।

(६) एरण्ड की जड़, गोखरु, रासना, सौंफ और साठी की जड़ पुनर्नवा का काढा पीलावे।

(७) एरण्ड की बीज की गुदी दूध में पकाकर खीर के समान पिलावे।

(८) सोठ, हरड़, पीपल, निशोथ और काला नमक, समभाग लेकर चूर्ण बना ले। इसमें से ३ माशा गरम दूध के साथ देवे।

(९) चोब चौनी का चूर्ण ३ माशा, दूध के साथ सेबन करे।



सूजन (शोथ, ईंडिमा)

पर्किचान्न — सारे शरीर में या आधे शरीर में या किसी एक अग में शोथ या सूजन हो सकती है। चोट लगने से, पकने या घाव बनने से पहले जो सूजन होती है, वह इससे भिन्न है, उसे 'त्रयशोष' कहते हैं।

सूजन का कारण खून और रस का दौरा ठीक नहीं होना है। मास आदि धातुओं में रस इकट्ठा हो जाता है। इससे सूजन पैदा हो जाता है। कमजोरी, खून की कमी, हृदय रोग, आदि इसके कारण हैं। खटाई खाने, कब्ज रहने, दिन में सोने मैथुन करने, विरोधी और जलन करने वाले भोजन, मास-शाक, वेंगों को रोकना, ये सब वाते शोथ वाले रोगी को बड़ाने वाली होती हैं।

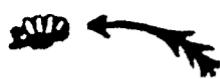
चिकित्सा :— (१) हल्का, शुष्क और गरम भोजन करें।

(२) हरड का चूर्ण ६ माशा और पुराना गुड १ तोला मिलाकर खावें ग्रथवा पीपल का चूर्ण १-२ माशा गुड़ के साथ मिलाकर खावें।

(३) पुनर्नवा की जड, नीम की छाल, परवल के पत्ते, सोंठ, कुटकी, गिलोय, देवदार और हरड को समभाग लेकर जौ कूटकर २ तोला मात्रा में ३२ तोला जल में उबालकर २ तोला वाकी रहने पर धानकर शहद मिलाकर पीवें। यह सूजन में बहुत उपयोगी काढा है।

४४

कुष्ठरोग, (चमड़ी की बिमारियां, खून खराबी)



प्रक्षिप्तान्वयन — शरीर की चमड़ी आदि को खराब देखने में बुरी, करने वाली वीमारियाँ “कुष्ठ” कहलाती हैं। इस प्रकार चमड़ी की सारी विमारियों को इसमें शामिल किया जाता है। इसमें खून और चमड़ी की खराबी होती है।

दूध-मछली आदि विरुद्ध अन्नपान, कच्चे और भारी अन्नपान, भोजन के ऊपर भोजन करना, मल-मूत्र आदि के वेगों को रोकना, भोजन के बाद कसरत करना, अधिक अग्नि और धूप का सेवन करना, परिश्रम के बाद तत्काल शीतलजल का सेवन, दिन में सोना, दही-मछली-नमक-उड्ड-ग्रालू मिट्टों के पदार्थ, तिल-गुड और खटाई का अधिक सेवन, नये अनाज का सेवन, पितां-माता-गुरु-ब्राह्मण और बड़ों का तिरस्कार करना और अन्य नीच-कार्य करने से कुष्ठ रोग पैदा होते हैं। उपसर्ग से भी कुछ कुष्ठ रोग फैलते हैं। इनमें गलित कुष्ठ (लेप्रोसी, कौढ़) मुख्य है, इसमें हाथ पाँव की अंगुलिया, नाक आदि गल जाते हैं। विचक्षिका। (गीला एक्विजमा), कच्छु (सूखा एक्विफमा), दाद (दद्रु) पामा (स्कैविज) आदि कुष्ठ रोग के ही प्रकार हैं। इस प्रकार खानपान की गडबडी, पापकर्क, उपसर्ग और खून की खराबी—ये कुष्ठ रोग के मुख्य हेतु हैं।

चिकित्सा — [१] रोगी को दही, मद्य, मछली, नमक, उड्ड, मूली, गुड, विरोधी भोजन और वीर्य-नाश से बचना चाहिए। क्योंकि विना इनका परहेज किये कुष्ठ रोग ठीक नहीं होते।

[२] पेट को हमेशा साफ रखें। इसके लिए हरड, या त्रिफला या सनाय या अमलतास से बार-बार जुलाब लेते रहे।

[३] आंवले का चूर्ण ६ माशा, दिन में दो बार, जल या दूध से लेवे।

[४] नीम के पचांग ना चूर्ण ३ में ६ माशा धी या दूध या जल से लेवें । इसमें हरड का चूर्ण, आवला का चूर्ण और मिश्री मिलाकर भी ले सकते हैं ।

[५] शुद्ध किया हआ आमलासार गंधक ४ रत्ती से १ माशा तक धी और मिश्री मिलाकर, दूध के अनुपान से लेवे ।

(६) लेप :- कमीला, देशी धी या तेल में मिलाकर लगावे अथवा नीम के पत्तों को जलाकर काली राख बनावे, इसे धी में मिलाकर लगावें । अथवा गंधक को पीसकर धी में मिलाकर लगावे ।

[७] ऊंटीया गंधक का चूर्ण सभ्मो के तेल में मिला कर मद्दन करने (रगड़ने) से खुजली मिटती है ।

[८] नीम के बीज का सेवन करें । अथवा बीज का तेल निकालकर चमड़ी के रोगों में इस्तेमाल करे ।

(९) सुहागा और गंधक समान मात्रा में लेकर नीबू के रस में खरल कर गोलिया बनाले । इसे नीबू के रस में घिसकर “दाद” पर लगावे ।



सफेद कोट, शिशत्र स्युकोड मर्म

पह्लीचान — चमड़ी पर सफेद दाग वन जाते हैं। इनमें किसी तरह की पीड़ा, जलन और खुजली आदि नहीं होती। परन्तु दिखाने में मन को कष्ट पहुँचता है। चमड़ी का रंग खराब हो जाता है, अत इसे कुछ में माना जाता है। यह अज्ञात कारणों से पैदा होता है। आनुवशिकता भी इसका एक कारण है।

चिकित्सा — वावची का चूर्ण १ से ३ माशा, ठण्डे जल से प्रात साय सेवन करे।

(२) वावची का चूर्ण और नीम का तेल बताशे में डालकर खाये।

(३) कठगूलर के जड़ को छाल, चित्रक की जड़, नीम के बीज और वावची प्रत्येक समभाग लेकर चूर्ण कर ले। ३ से ६ माशा की मात्रा में सोते समय गर्म जल से सेवन करे।



पित्ती उछलना [शीत पित्त; अटिंकेरिया]

जह्निच्चान्न — शीतन वायु लगने से कफ और वायु कुपित होकर पित्त के साथ मिलकर सारे शरीर में फैल जाते हैं, इसमें त्वचा और रक्त में विकृति होती है। सारे शरीर में चमड़ी पर तत्तेया (वर्ण) के काटने जैसे चक्कते (वट्टे, वष्पड, ददौडे) हो जाते हैं। तेज खुजली होती है उलटियाँ आती हैं बुखार और जलन होती हैं। यह रोग प्रायः शीतकाल में शीतल जल के स्पर्श से होता है। शरीर पर वापड़, या ददौडे निकल आते हैं।

चिकित्सा — (१) पेट साफ रखना चाहिए। हरड़ या अमलतास का जुलाव लेना चाहिए।

(२) स्नान के लिए गुनगुना जल लेना चाहिए। खाने में घन्डी, चीजे कब्ज करने वाली चीजों और अधिक मिर्च, खटाई आदि न खावें।

(३) रोगी को कम्बल ओढ़ाकर अजवायन की धूती देनी चाहिए।

(४) गेहूँ, हल्दी, काली मिर्च, मर्जीठ, अड्डसा इन का चूर्ण ६ माशा शहद के साथ चाटें।

(५) आवले का चूर्ण ६ माशा पुराना गुड १ तोला मिलाकर जल के साथ प्रातः साय लेवे।

(६) अजवायन ३ माशे और पुराना गुड १ तोला मिलाकर सुबह शाम लेना चाहिए।

(७) हल्दी का चूर्ण ३ माशा और मिश्री या शहद १ तोला मिलाकर सुबह शाम सेवन करें।

(८) हरड़, वेहड़ा, आवला, नीम की छाल, मर्जीठ, बच, कुटकी, गिलोय और दाढ़, हल्दी, इन नींद्रव्यों को एक-एक तौला लेकर जौ कुटकर रखलेवे। यह कुल नींद्रला होगा। इसके तीन भाग कर प्रतिदिन एक भाग (इस प्रकार तीन दिन तक आठ गुने जल में पकाकर चौथाई बाकी रहने पर उतार कर शहद मिलाकर पिलावे। (इसे “ नवकार्यिक कवाथ ” कहते हैं।)

(९) ददौडों पर सज्जीखार या भीठा सोडा पानी में घोलकर या सरसों के तेल में मिलाकर लगाना चाहिए।

पेशाब की बिमारियाँ

पेशाब, रुकना, पथरी (मूत्रधात और अश्मरी)

पहिचानः—

मूत्रधात (पेशाब रुकना) :- इसमें पेशाब विलकुल नहीं उतरता, अथवा पेशाब वूँद-वूँद करके बिना दर्द के निकलता है, पेशाब की थैली (मूत्राशय) पूर्ण रूप से भर जाता है—जिससे नाभि के नीचे पेट में उभार हो जाता है।

अश्मरी (पथरी) :- नाभि, सेवनी, अण्ड और पेहू में दर्द होता है। पथरी के द्वारा पेशाब का मार्ग रुक जाता है और कभी-कभी बिखरी हुई धाराओं के रूप में निकलता है। पेशाब का रग सफेद, धुंधला, पीला या खून जाने से लाल हो सकता है। जोरकर पेशाब करने से बहुत दर्द होता है।

चिकित्सा—मूत्रधात और अश्मरी दोनों की चिकित्सा में प्राय. समानता है।—

(१) पेठे के ४ तोला रस में जौ खार १ माशा मिलाकर पीवें।

(२) जौ खार १ माशा और मिश्री मिलाकर जल से सेवन करें।

(३) गोखरु के २ तोला काढ़े में जौ खार १ माशा मिलाकर पीते से अच्छा लाभ होता है।

(४) कुश, कास, शर, दाम् और गन्ने की जड़ को समझाए लेकर जौकूट करें। १-२ तोला चूर्ण को अगुने जल से क्वाथ बनावें, शेष चौथाई रहने पर उतार कर छानकर पिलावें अथवा इन द्रव्यों से

दूध पकाकर पिलाये । इससे पेशाव खुलकर आता है और मूत्राशय साफ होता है ।

(५) गन्ने का रस प्रचूर मात्रा में पीवे ।

(६) छोटी इलायची के दाने, पाषाण भेद, शुद्ध शिलाजीत और छोटी पीपल को सम भाग लेकर चूर्ण बनावे । इसकी २ मात्रा लेकर चावल के पानी से देवें ।

(७) गोखरु, तालमखाना, छोटो कटेरी, बड़ी कटेरी और एरण्ड की जड़ का समभाग चूर्ण बनावे । ६ माशा लेकर मीठे दही के साथ सेवन करे । अश्मरी को निकालता है ।

(८) कुलथी को पानी में उबालकर पीवे और कुलथी की सब्जी बनाकर खावे ।

(९) गोखरु के बीच का चूर्ण ६ माशा शहद १ तोला मिलाकर खानें और ऊपर से बकरी का दूध भी दे ।

(१०) वरुणे की छाल का काढ़ा बनाकर पीवें ।



प्रमेह

पहिचान — जिस रोग में ग्रत्यधिक मात्रा में और

बार-बार पेशाव होता है, उसे 'प्रमेह' या 'मेह' रोग कहते हैं। इसके साथ पेशाव में गदलापन भी पाया जाता है।

यह एक सार्वदेहिक रोग है। शरीर में यह रोग पीष्टिक, मीठे और चिकने पदार्थों के ग्रधिक सेवन करने तथा परिश्रम न कर अधिक सोने, बैठने और आराम करने से पैदा होता है।

प्रमेह का ही एक परिणाम (वाद में होने वाला रोग) पेशाव में शक्कर आना है इसे 'मधुमेह' (डायबीटिज) कहते हैं।

चिकित्सा — (१) रोगी को नित्य कुछ भ्रमण की हल्के व्यायाम की, शारीरिक श्रम करने की आदत डालनी चाहिए।

(२) अधिक चिन्ता, मानसिक श्रम नहीं करना चाहिये।

(३) भोजन में शक्कर, मिट्टी के पदार्थ और चिकने पदार्थ न खाये। जी, सावा, कोदो और वेसन-गेहूं की रोटी जैसे रखे पदार्थ मेवन करने चाहिए। इसमें सबसे अच्छा जी का सेवन है। दही, गुड़, मास आदि न लेवे। दिन में सोना, तैल आदि छोड़ देवे। ताजा गाय का दूध लेना चाहिए।

(४) हल्दी का चूर्ण २ माशा शहद ६ माशा मिलाकर चाटें।

(५) आवले का चूर्ण ६ माशा शहद १ तोला मिलाकर चाटें।

(६) गिलोय व आवले का रस शहद मिलाकर पीवे।

(७) गिलोय का सत १-२ माशा शहद के साथ चाटे।

(८) शुद्ध शिलाजीत १ माशा की मात्रा में दूध में घोलकर पीवे।

(९) गुडमार की पत्ती का रस या क्वाथ या चूर्ण बनाकर सेवन करे।

(१०) वेल के पत्तों का रस निकालकर शहद मिलाकर पीवे।

(११) जामुन की गुठली का चूर्ण १-३ माशा शहद के साथ चाटे।

(१२) त्रिफला (हरड़, वहेड़, आवला) का चूर्ण २-४ माशा शहद के साथ चाटे।

(१३) विजयसार की लकड़ी को पानी में डाल देवे। जब पानी का रंग कुछ लाल हो जाये तो उसे पीवे।

वीर्यरोग (पुरुषों का रोग)

पहिचान—आजकल यह बीमारी अधिक देखने को मिलती है। फिर भी अधिकतर तो रोगी भ्रम के कारण ही मानसिक रूप से दुखी पाये जाते हैं।

सहशिक्षा, कामुक चलचित्र देखने, साहित्य के पढ़ने और खान-पान के दूषित होने के कारण अनेकों युवकों में वीर्य का पतलापन, स्त्री-सहवास के समय गीघपतन, कभी-कभी विना स्त्री समागम के ही केवल मन की उत्तेजना-मात्र से ही वीर्य का स्खलन (गिरजाना), स्वप्नदोष, नपुंसकना, इन्द्रिय की शिथिलता आदि रोगों से पीड़ित हो जाते हैं। इसके साथ शारीरिक दुर्बलता, पाण्डु, स्मरणशक्ति की कमी, भूख कम लगना, विशेष चिन्ताएं घर कर लेना, आखों के सामने अन्धेरा छा जाना, भय, कृशता कार्यशक्ति की कमी, कब्ज रहना और पेशाव में कभी-कभी जलन होना आदि लक्षण पाये जाते हैं। वास्तव में पौष्टिक आहार-पान का सेवन करने से, शारीरिक परिश्रम व व्यायाम न करने से और विषय-स्त्रीभोग का अधिक चिन्तन करने से ये सब विकार पैदा होते हैं।

चिकित्सा—(१) हल्का यथाशक्ति व्यायाम करें।

(२) मानसिक शुद्धि रखें। कभी स्त्रीभोग का चिंतन न करें। ईश्वर चिंतन करने से यह कार्य सम्भव हो जाता है। वासना जागृत होने पर प्राणायाम करें व शीतल जल से पैर धोएं।

(३) आमले का रस १ तोला, शहद मिलाकर पीवे। अथवा आमले का चूर्ण (रसभावित हो तो उत्तम है) ३ से ६ माशा दूध के साथ सेवन करें।

(४) हल्दी, त्रिफला और गिलोय का ममभाग चूर्ण बनाकर मिश्रो मिलाकर सेवन करें।

[५] कौच के बीज दूध के अन्दर पकाकर खायें।

[६] असगध का चूर्ण १ तोला, १ पाव दूध में उबालकर, मिश्रो मिलाकर पीवे।

[७] प्याज का रस १ तोला, ३ माशे शहद मिलाकर पीवें ।

[८] उड़द की दाल को छिलकारहित करके, वी में भूनकर, दूध में पकाकर, मिश्री मिलाकर खायें ।

[९] असगंध १ भाग, विवारा १ भाग, मिश्री २ भाग, लेकर कपड़छान चूणे बनाकर रखलेवे । २-३ माशा, गरम दूध से लेवे ।

[१०] गोखरू का चूर्ण ३ से ६ माशा, दूध के साथ सेवन करें ।

इन प्रयोगो से वीर्य गाढ़ा बनता है । वीर्य की बुद्धि करने में भी ये योग लाभकारी है । नपुंसकता मिटती है ।





फोड़ा और धाव

ब्रण शोथ, विद्रधि ब्रण



पहिचानः— सूजन (ब्रणशोथ) होकर फोड़ा (विद्रधि) बनता है वह फूटने पर धाव (ब्रण) बन जाता है । फोड़े दो प्रकार के होते हैं भीतरी और बाहरी । बाहरी फोड़े की चिकित्सा आसानी से की जा सकती है । किन्तु भीतरी फोड़ा फूटने पर मवाद [पीप] भीतर के अंगों में भर जाती है जिससे ग भीर लक्षण पैदा होते हैं । बाहरी चोट आदि से भी धाव बनता है । इसमें जलन, पीड़ा अधिक होती है ।

चिकित्सा— [१] नमक और खटाई न खावें । हल्का और पौष्टिक आहार करें । इससे धाव भरने में मदद मिलती है । [२] वरने की छाल का काढ़ा बनाकर, उसमें २ रत्ती भूनी हुई हीग, २ रत्ती शुशिलाजीत मिलाकर पीने से सब प्रकार के धाव ठीक होते हैं ।

[३] संहिजने का काढ़ा, हीग और सेंधानमक मिलाकर पीना चाहिए ।

[४] पुनर्नवा और वरने का काढ़ा बनाकर पीना चाहिए ।

[५] अलसी या हल्दी की पुलिट्स मूजन परबाँधनी चाहिए ।

[३] सूजन पर नीम की ताजी पत्ती, हल्दी, धी, शहद, तिल और जो का आटा, इनको जल के साथ पीसकर मंदी आच पर पकाकर कपड़े पर विछाकर, ऊपर दूसरा कपड़ा रखकर बाघने से सूजन बैठ जाती है या पक जाती है । और पकी हुयी सूजन जल्दी फूट जाती है ।

नास्तृत — इसमें धाव गहरा, पतला, नाली-नुमा होता है। इसिलिए धाव भरने में समय ज्यादा लगता है।

[१] दारु हल्दी के चूर्ण को शूहर के दूध और आक के दूध में घोटकर बस्ती बनावे। इसे नासूर में रखकर ऊपर से पुलिंग बाधने से ठीक होता है।

[२] प्रतिदिन धाव को त्रिफला के काढे से धोना चाहिए।

जल्ले हुथ्ये धाव —

[१] अलसी के तेल को चूने के जल में फेटकर लगावें।

[२] शुद्ध धी में राल का चूर्ण (महीन) मिलाकर लगावें।

[३] मुलेठी के चूर्ण को धी में पकाकर, उस धी को जले हुए धाव पर लगावें।

नारू :—

(१) हल्दी और चूने को जल में घोटकर लेप बनाकर लगावें।

(२) डीकामली का चूर्ण ३ माशा गरम जल से पिलावे।

बिवाई फट्टना

(१) तिल के तेल को गरम कर उसमें पिधाला हुआ देशी मोम मिलाकर मलहम बना लेवे। इसे कटी बिवाईयों पर लगावें।



अध्याय-१०

मानसिक विमारिया

पागलपन (उन्माद)

पक्षिचान्न — विश्व और अपवित्र भोजन करने से, विष सेवन मे, देवी-देवता, ब्राह्मण, माता-पिता और वडे लोगों का निरादर करने से, इसी प्रकार के अन्य नीच कार्य करने से, अधिक चिन्ता, शोक, भय, काम से मन उन्मत्त हो जाता है। उसे 'उन्माद' (पागलपन) कहते हैं। इसमे रोगी असमय में (विना प्रयोजन के) हसने या गाना गाने आदि काम करने लगता है। उसकी लज्जा, बुद्धि और निन्द्रा मे फर्क होने लगता है। वह गुप्त वातो को प्रकट करने लगता है। उसके चित्त मे उद्वेग और भ्रम उत्पन्न हो जाता है। शोक, भय, कामादि से होने वाले उन्माद मे रोगी निरन्तर शोक आदि की वात-चीत करता रहता है।

प्राचीन वेदों ने उन्माद के ८ भद्र किये हैं :-

(१) वायु से होने वाला [२] पित्त से होने वाला [३] कफ से होने वाला [४] तीनो दोषो से होने वाला [५] विष से होने वाला [६] काम भ्रम शोक आदि मानसिक दुखो से होने वाला। दोषज उन्माद मे दोपानुसार लक्षण होते हैं। विषज मे विष के अनुसार, शोक भय, कामादि मानसिक दुखों से होने वाले उन्माद मे रोगी शोक आदि की वातचित करता रहता है।

इनके ग्रतिरिक्त भूतबाधा से भी पागलपन होता है। इसे 'भूतोन्माद' कहते हैं। भूतो को ग्रह भी कहते हैं। देव, देत्य, पिशाच, सर्प, गन्धर्व, रक्षस, यक्ष, पितर—ये ८ ग्रह होते हैं। इनके शरीर मे आवेश या प्रवेश से भी पागलपन हो जाता है। इनमें विशेष लक्षण

होते हैं। जैसे देवज उन्माद में पवित्रता, दैत्यज में देवताओं के साथ द्वेष करता, पिशाचज में नग्न रहना, सर्पज में सर्प की भान्ति गमन करना, रक्षौज में बहुत अधिक भोजन करना, गन्धर्वज में गाना-गाना यक्षज में दान देना, पितृज में श्राद्ध करना।

चिकित्सा — (१) ब्राह्मी की पत्तियाँ (ताजी गीली हो तो ३ माशा और सूखी हो तो १ माशा) और काली मिर्च १० से १५ नग लेकर जल के साथ घोटकर पीवें।

(२) ब्राह्मी या मण्डुकपर्णी १ तोला शहद में मिलाकर पीवे।

(३) मीठी बच का चूरंग १ माशा, शहद में मिलाकर चटावे।

(४) शख्पुष्पी का रस १ तोला, शहद में मिलाकर पिलावे।

(५) पुराना धी दूध में मिलाकर, प्रतिदिन पीने से उन्माद ठीक होता है।

(६) गधे का पेशाब प्रतिदिन १ से २ तोला रोगी को पिलावे। इसके लिए यह आवश्यक है कि रोगी को इस वात का पता न लगे कि उसे गधे का मूत्र पिलाया जा रहा है। अन्यथा वृणा होने का भय रहता है।

(७) पौष्टिक भोजन, दूध, धी, हल्का व्यायाम, इस रोग में हितकर होता है।



मृगी या मिरगी रोग (अपस्मार)

पक्षिचान्त — जिस रोग में स्मरण अक्षित का नाश हो जाता है, उसे 'अपस्मार' या 'मृगी रोग' कहते हैं। इसमें रोगी के आखों के मामने और वेग छा जाता है। मुँह से खाग निकलते हैं। शरीर कापता है और हाथ-पैर पटकने और ऐठने लगता है। इसका वेग २० से ३० मिनिट रहता है। बाद में रोगी पूरे होश में आ जाता है। ग्रचानक गिरने और जबड़ा बन्द होने से दाँतों में अटककर जीभ कट जाती है। इसमें रोगी बेहोश होकर गिर जाता है। उसे गिरने का विल्कुल स्पान नहीं रहता।

हिस्टिरिया और मूर्छा रोग में भी बेहोशी होती है, किन्तु इन दोनों रोगों ने मुँह से खाग आना और शरीर कापना, यह लक्षण नहीं मिलते। अपस्मार के वेग कभी भी होते हैं।

चिकित्सा — (१) मिठी वच का चूण १ माशा मधु के साथ चटावे। साथ में रोगी को केवल दूध और भात के भाजन पर रखें।

(२) गतावरा को दूव में पकाकर पीलावे।

(३) गधे या गधी का मूत्र २ से ४ तोला प्रतिदिन सुवह पिलावे।

(४) रोगी का तालाव, बावडी, नदी, ग्रनिं के समीप बैठने, पेड़ और पहाड़ पर चढ़ने आदि कार्यों से बचाना चाहिए। क्योंकि वेग होने पर रोगी ग्रचानक गिर पड़ता है और इसकी मृत्यु का भय रहता है।

(५) पेट साफ रखने के लिए हरड या अमलताश का जुलाव देवे।

(६) 'लहसुन' को तेल में पकाकर सेवन करावे।

(७) गाय, का धी, दूध, दही मूत्र और गोबर मिलाकर ५ से

१० तोला प्रतिदिन प्रात काल पिलावें। इसे 'पंचगव्य' कहते हैं। यह
१ से २ साल तक देना चाहिए।

(द) ब्राह्मी या मण्डूकपर्णी की लुगदी को शहद में मिलाकर
चटावें।

(६) पेठे के रस में शहद मिलाकर चटावे।



हिस्टरिया 'योषापस्मार'



पहिचान—यह स्त्रियों और कोमल प्रकृति के व्यक्तियों में होने वाला मृगी का रोग है। इसके दौरे निश्चित समय पर नहीं होता। किन्तु मृगी से इसका वेग कम होता है। सोते समय या एकान्त में कभी नहीं होता। रोगी ग्रचानक नहीं गिरता। इसीलिए चोट नहीं लगती। आखें और गरदन टेढ़ी नहीं होती और मुह से फाग नहीं निकलते। इसका गर्भाशय की विकृति से सम्बन्ध होता है। जिन 'स्त्रियों' को मासिक धर्म ठीक से नहीं होता, अधिक प्रसव होने से गर्भाशय-दुर्बलता हो जाती है और मानसिक चिन्ताएँ व क्लेश निरन्तर वने रहते हैं, तो यह रोग होता है।

चिकित्सा—उसमें वे ही औषधियाँ वरते जो 'मृगी रोग' में काम आती हैं।

मासिक धर्म ठीक न हो रहा हो तो माँ सकठीक आने के दबाव, दें। (स्त्रियों की विमारियों के अन्तर्गत नष्टार्तव व कष्टार्तव की चिकित्सा देखें।)



बच्चों में होने वाली बिमारियाँ बाल रोग

(१) **दर्दक्षें लगान्ना**—(१) चावल की खील, सेवानमक और आम की गुठली का काढ़ा बनाकर, शहद मिलाकर पिलावे।

(२) जायफल, मरोडफली, सेवानमक और सोठ को जल में घिसकर धासा बनावे और बालक को चटावे। इसमें थोड़ी केशर मिलाने से अधिक लाभ होता है।

(२) खाँसी, लुखाउ और दर्दक्षें, डल्टो भ्वे—(१) नागरमोथा, अतीस और काकडासीगी, छोटी पीपल का महीन कपड़छन चूर्ण बना उसमें से दर्ती, शहद मिलाकर दिन में ३-४ बार चटावे।

(२) बच्चों को खासी में सुहागे की खील का चूर्ण २ में ३ रत्ती शहद में चटावे। इसमें मुह के छाले भी ठीक होते हैं।

(३) जन्मधृद्वी—सोंफ की जड़, वायविडंग, अमलतास का गूदा, छोटी पीपल, छोटी हरड, बड़ी हरड का छिलका, बाला, सफेद जीरा, अजवाइन, गुलाब फूल, पलाशबीज, मुनका, उन्नाव, भूना हुआ सुन्दागा और काला नमक इन सबको वरावर-वरावर मात्रा में मिलाकर कपड़छन चूर्णकर रखें। इसकी १ माशा तक मात्रा। इसे थोड़े से गरम जल में घोटकर गुड़ मिलाकर बच्चे को पीलावे। इससे बच्चों का अपचन, अफारा, पेट के कीड़े, कब्ज और बुखार आदि रोग दूर होते हैं।

(४) छोटी कटेरी के फूल की केशर १ माशा पीसकर शहद के साथ चटाने से बच्चों की खांसी दूर हो जाती है।

(५) बच्चों की कफज खांसी में लहसुन की भस्म (कालीराख) १-२ रत्ती शहद के साथ चटावे।

(६) बच्चे की उल्टी और दूध निकालने में सोफ और बाय-विडग मिलाकर, दूध उबालकर देवे।

(७) सूखा रोग और बच्चे की कमजोरी में मंदूर भस्म और कोडीभस्म (१-१ रत्ती) शहद में मिलाकर देवें। प्रतिदिन जैतून के तेल की मालिश करें।



स्त्रीरोग

औरतों में होने वाली बिमारियाँ

स्त्रियों में सामान्य रोगों के अतिरिक्त प्रजनन-संस्थान से सम्बन्धित कुछ खास बिमारियां होती हैं। जिन पर समय पर व्यान देना जरूरी है। स्त्रियों में खासकर जननागों सम्बन्धी, गर्भविष्या में होने वाले, प्रसव के बाद होने वाले कुछ खास रोग होते हैं।

(१) रक्त प्रदरः— योनि मांग से असमय में खून जाना, अधिक माहवारी होना, लम्बे समय तक माहवारी होते रहना, 'रक्तप्रदर' कहलाती है। इससे खून को कमी, कमजोरी, सास फूलना, आदि बीमारिया हो सकती है।

चिकित्सा— (१) श्रशोक की छाल का चूर्ण १ तोला दूध १/२ पाव और पानी १/२ पाव मिलाकर ग्रोटावें। केवल दूध शेष रहने पर, छानकर विलावे।

(२) गूलर के पके फलों का चूर्ण ३ में ६ माशा, मिश्री मिला कर दूध के साथ देवें।

(३) रसोत का चूर्ण ३ माशा, चावल के पानी के साथ पीवे।

(४) बबूल की कच्ची फली (सीगरी) का चूर्ण ६ माशा चावल के मांड से लेवें।

(२) श्वेतप्रदरः— इसमें योनिमार्ग से सफेद, बदबूदार और पानी जैसा स्राव निकलता है। इसके दो ही मुख्य कारण हैं—(१) भीतरी जननागों में सूजन होना (२) जीर्ण व्याधि होना या अत्यन्त कमजोरी होना।

चिकित्सा—(१) असगध का चूर्ण ३ माशा, मिश्री मिलाकर दूध के साथ खावें।

(२) असगध, विवारा और समुद्रशोष का चूर्ण बनावें। ३ से ४ माशा दूध के साथ सुबह शाम लेवे।

[३] गतावरी का चूर्ण ३-६ माशा, दूध के साथ लेवे।

[४] असगध और अशोक की छाल का चूर्ण मिलित ४ माशा, दूध से देवे।

नष्टातंव और कष्टातंव:- माहवारी का समय से पूर्व ही बन्द हो जाना “नष्टातंव” कहलाता है। माहवारी के समय कमर, पेट में दर्द होना, मंद ज्वर रहना, बदन दूटना और रुक रुक कर या काले रंग का खून आना, “कष्टातंव” कहलाता है।

चिकित्सा—[१] मूली के बीज, गाजर के बीज और मेथीदाना का काढ़ा बनाकर, गुड मिलाकर पीना चाहिए।

[२] ग्वारपाठे के गूदे की सब्जी बनाकर सेवन करें।

(४) गर्भज बमन :- [गर्भावस्था में होने वाली उल्लिखियाँ]

गर्भावस्था में गर्भधारण के प्रथम दिन से या कुछ दिनों के बाद से कई स्त्रियों में बमन और बैचैनी, जो अधिकतर सुबह रहती है, गर्भावस्था के ६-७ वें महीने तक रहती है।

चिकित्सा—[१] लौंग जलाकर पानी घिसकर पिलावे।

[२] धनिया ६ माशा, मिश्री १ तौला मिलाकर चावल के पानी से लिलावे।

[३] गिलोय के काढ़े में शहद मिलाकर पिलावें।

[४] अर्क सौफ़ और अर्क पुदीना, दिन में कई बार देवें।

(५) गर्भजशोथः—कई स्त्रियों में गर्भावस्था के अन्तिम दिनों पैरों में शोथ-सूजन हो जाती है। इसमें कुश, कास, सरकड़ा, डाभ और गन्ने की जड़ का काढ़ा बनाकर पिलाना चाहिए।

(६) गर्भस्त्राव, गर्भपात और पूर्वकालिक प्रसव (समय से पहले प्रसव होना) :- कुम्हार के चाक की मिट्टी ३

माशा को, मिश्री मिले हुए वकरी के दूध के साथ पीना चाहिए। इससे गर्भ के गिरने में होने वाला रक्त खाव सकता है।

(२) मुलेठी, लोध का चूर्ण, दूध में पकाकर अथवा मिश्री मिलाकर दूध के अनुपान से लेवें।

(३) **सूतिका रोगः--** प्रसव के बाद यदि सारे बदनमें दूटने जैसी पीड़ा, कम्पन, प्यास की अविकता, शरीर में भारीपन, सूजन, दर्द और दस्ते लगना प्रारम्भ हो जाय तो उसे 'सूतिका रोग' कहते हैं।

चिकित्सा — इसमें वातनाशक चिकित्सा करनी चाहिए।

(१) यदि ज्वर हो तो दशमूल का काढा बनाकर पिलावें।

(२) सूतिका रोग के अन्य लक्षणों में देवदारू, वच, कूठ, पीपल, सोठ, चिरायता, कायफल, नागरमोथा, कुटकी, धनिया, हरड का छिलका, गजपीपल, जवासा, गोखरु, छोटी कटेरी, बड़ी कटेरी, अतीस, गिलोय, काकडासिधी, कलौजी, जीरा, सब द्रव्य समभाग लेकर, जो कूटकर रखें। ढाई तोले को १/२ सेर पानी में पकाकर, ५ तोला शेष रहने पर छानकर थोड़ी हीग और सेवा नमक मिलाकर पिलावें।

(४) **दूध बढ़ाने के लिए :-**

(१) शतावरी को दूध में पकाकर पीवें।

(२) शतावरी, साठी चावल और सफेद जीरे का कपड़छन चूर्ण बना लेवें। ६ माशा सुवह-शाम गाय के दूध में मिश्री मिलाकर लेवे।

(३) विदारीकन्द ६ माशा दूध के साथ मिश्री मिलाकर पिलावे।

(५) **बांझपनः--**स्त्रियों में वाभपन अनेक कारणों से होता है। विवाह के उपरान्त लगभग तीन साल के बाद सन्तान पैदा नहीं होती है तो स्त्री और पुरुष दोनों की जांच की जानी चाहिए। स्त्री में गर्भधारण की शक्ति को बढ़ाने के लिए निम्न योग दिये जा सकते हैं—

(१) नरकचूर, सोठ, वार्यविडग और नागकेशर, समान भाग लेकर चूर्ण बनावें। सुवह और शाम को ३ माशा चूर्ण धी के साथ चटावे।

(२) असर्गंध का चूर्ण दूध और धी के साथ पकाकर पीवें। मासिक के बाद चौथे दिन से एक सप्ताह तक इसका सेवन करें। ●

४

मुँह, नाक; सिर; आंख और
कान की बिमारियां

मुख रोग-मुँह की बिमारियां



मुँह में छाले होना :-

प्रक्सर पेट की खराकी से मुँह में छाले हो जाते हैं।

चिकित्सा.— न० (१) चमेली की पत्ती को मुख में रखकर चबाने से छाले ठीक होते हैं।

(२) रसोत का चूर्ण शहद में मिलाकर लगाने से छाले ठीक होते हैं।

(३) फिटकरी को पानी में घोलकर उसमें कुल्ले करे।

दंतवेष / पायोरिया :-

दातो के मसूड़ों में सूजन और लाली रहती है। इसमें पीप निकलता है। दात हिलने लगते हैं। रोगी के मुँह और श्वास में दुर्गंध आती है। निगले हुए पीप के कारण अमाशय और आँतों में सोजिश आ जाती है, जिससे अग्निमद होना, पेट में दर्द, सुस्ती, खून की कमी और चमड़ी के रोग हो जाते हैं।

चिकित्सा.— (१) फिटकरी में मिलाये हुए जल से गरारे करें।

(२) नीम की दातुन वरते।

(३) फिटकरी, खडिया मिट्टी, विया भाटा (द्रव्य पाषाण) सेधानमक, प्रत्येक, १-१ भाग, देणी कपूर १/२ भाग, इनका महीन तूर्ण कर मंजन करने से मसूड़ों से खून और पीप आना रुकता है दात स्वच्छ और मजबूत हो जाते हैं।

(४) सोठ, नागर मोथा, हरड, कत्था, कपूर, सुपारी की जलाई हुई काली राख, काली मिर्च, लगौ, दाल चीनी, प्रत्येक १-१ भाग और सबके बरावर खडिया मिट्टी लेकर महीन चूर्ण करे। इसका मंजन करने से दाँत स्वच्छ एवं मजबूत होते हैं।

३, (दतशूल) दांत का दर्दः—

(१) लोग के तैल का फाया दातो में लगाने से दांत का दर्द शान्त होता है।

(२) कर्पूरधारा का फोया दात में लगाने से पीड़ा शान्त होती है (अमृतधारा)।

(३) रुई में फिटकरी रखकर दांत के छिद्र में भरकर मुँह नीचे करके लारे टपकाने से दांत का दर्द ठीक होता है।

४. कृमिदंतः— दांत में कोड़े लगानाः—

(१) तम्बाकू की पत्ति का चूर्ण दातो पर मलना चाहिए।

(२) हीग को गरम कर रुई में लपेटकर दांत के छिद्र में भरना चाहिए।

५. कष्ठ शालूक (टोन्सिल की सूजन)

(१) सुहागे की खील का चूर्ण शहद में मिलाकर सूजन पर लगावे।

(२) बबूल की छाल मुँह में रखकर चवाते हुए चूसना।



नासारोग-नाक की बिमारियाँ



जुकाम — [१] गरम पानी में नीवू निचोड़ कर पीने से जुकाम में आराम होता है ।

[२] कायफल का कपड़द्वान चूर्ण १ माशा, शहद में मिलाकर चटावे ।

[३] केशर को गाय के धी में मिलाकर, थोड़ा गरम कर, नाक में मुंधाने से पुराना जुकाम ठीक होता है ।

[४] पतली मूली और कुलथी को जल में पकाकर इसका गरम-गरम पानी पीने से लाभ होता है ।

[५] सोंठ, मीर्च, पीपल का चूर्ण सम भाग लेकर दुगुने गुड में मिलाकर चने के वरावर गोलिया बनावे । २-२ गोली गरम जल से दिन में ४ बार लेवे ।



सिर का दर्द



(१) नौसादर और चूने को मिलाकर सूंघने से शिर का दर्द शान्त होता है ।

(२) हरड़, बहेड़ा, आवला, चिरायता, हल्दी, तीम गिलोय; प्रत्येक ३-३ माशा लेकर १६ गुने जल में पकावें; जब चौथाई शेष रहे तब छानकर १ तोला गुड़ मिलाकर पिलावें । (यह पथ्यापडग कृधि) कहलाता है । सब प्रकार के शिर के रोगों में लाभकारी है ।

[३] सूर्योदय के साथ प्रारम्भ होने वाले सिर दर्द, जो प्राय दोपहर तक रहता है और फिर शात हो जाता है, को "सूर्यविर्त" कहते हैं । गोदन्ती भस्म १ माशा, या प्रवाल भस्म १ माशा, धी और मिश्री के साथ खाना चाहिए । सूर्योदय के पहले माझे में देशी कपूर (वररास) १ से २ रत्ती लपेटकर खावे और ऊपर से दूध पीवे । दूध के साथ जलेबी या मालपुए या रवड़ी का सेवन हितकर होता है ।

आधा शीशी (आधे शिर में दर्द होना) में भी सूर्यविर्त के ही चिकित्सा करनी चाहिए ।



नेत्ररोग-आँख की बिमारियाँ



(१) **च्यांस्के च्यान्ना**—नीम की पत्ती को पीसकर लुगदी बनावे। इसमे थोड़ा-सा सेधानमक मिलाकर गरम कर आँख पर वाधने से मूजन, मुजनी आँख आना दूर होता है।

(२) रसोत, फिटकरो ग्रीर सेधा नमक को जल के साथ पीस कर आँखों के चारों ओर लेप करे।

(३) चिफला (हरड, बहेडा, ग्रावला) के ४ तोला, क्वाथ में कुलाई हुई फिटकरो का २ रत्ती चूर्ण मिलाकर, इसकी ८-८ वूंद दोनों आँखों में दिन में ४ बार छोड़ें। ठण्डे मीसम में कुछ गरम कर, गर्मी में ठण्डा ही डाले।

(४) गुलावजल में रसो। घोलकर २-२ वूंद नेत्र में डाले।

(२) **च्यांस्क का फूला**—(१) वरगद के दूध में थोड़ा सा कपूर मिलाकर आँख में दिन में तीन बार डालने से फूला नष्ट होता है।



(कान की बिमारियां)



(१) **कान का चर्दू (कर्षाच्छुल):—**

(१) सरसो के तेल में छिलका रहित लहसुन की कलियां पकाकर कान में डालें।

(२) सुदर्शन की पत्ती का गरम रस कान में डालें।

(२) **बहरापन अधिकता —**

(१) पके हुए बेल के बीजों को कोल्हू में पेरकर तेल निकालें। वह तेल कान में डालने से बहरापन ठीक होता है।

(३) **कान का बहना —** कौड़ी को भस्म को कागज की भूंगली में रखकर कान में फूंक दें, तो बहना बन्द हो जायेगा।

(२) समुद्रफेन का चूर्ण कागज की भोगली से फूंक कर छोड़े।



अध्याय-१४



आकस्मिक दुर्घटनाएँ और उनका प्राथमिक उपचार



पहले हमने जिन विमारियों का उल्लेख किया है, उनसे अतिरिक्त कुछ ऐसी दुर्घटनाएँ भी होती हैं जिनसे अचानक विमारिया उठ सड़ी होती हैं, जैसे चोट लगना, आग में जल जाना, पानी में डूब जाना विष खा लेना या विषैले जीव-जन्तु से काट लिया जाना, लू लगना आदि।

[१] चोट लगना :- कई तरह से चोट लग सकती है।

कभी चोट से खून आता है और कभी नहीं आता; केवल सूजन हो जाती है। यदि केवल सूजन हो गई हो तो सेकना चाहिए। रसौत और फिटकरी को जल में धोलकर गर्म कर लेप करें। यदि खून बह रहा हो तो उसे रोकने का उपाय करें। तत्काल ठण्डे पानी में भीगे कपडे से पट्टी बाध दें या वर्फ का टुकड़ा चोट पर रखने से खून रुक जाता है। चोट की पीड़ा को शात करने के लिये थोड़े से तेल में हल्दी का चूर्ण डालकर गर्म कर, उसमें रुई के फोहे निचोड़कर, सुहाता-सुहाता गर्म फोहे से सेक करें। इससे चोट का धाव जल्द भरता है और पीड़ा शान्त होती है। अथवा धी में मुलेठी का चूर्ण डाल कर गरम करें, इसमें रुई के फोहे डालकर, सुहाते गर्म धी से सेंक करें। इससे भी धाव भरता है और पीड़ा शान्त होती है। मोत या मूँदी चोट पर प्याज हल्दी, आमा हल्दी, थोड़ा नमक, तिल की खली को मिलाकर, थोड़े से तिल के तेल में गरमकर, उसकी पोटली से सेंकने और उसे ही चोट या मोत वाले स्थान पर सुहाता गरम बाधने से आराम होता है।

2- आग से जलना :- वदन के कपड़ों में आग लगने पर उसे बुझाने के लिए कम्बल ओढ़ना रेत या मिट्टी डालने से आग बुझ

जातो हैं। पानी नहीं डालना चाहिए, पानी से ग्राग बुझ जाती है, पर जले और गो को नुकसान होता है और पानी लगने से तत्काल वहाँ पहांते हो जाते हैं।

जले हुए स्थानों पर नारियल का तेल और चूने का पानी निकार, फेटकर लगावे। दूरध स्थानों को रुई से ढक देवे, जिससे उन पर हवा, मक्खी, धूल आदि न लग सके। चाय की पत्ती पानी में खूब खौलाकर उस पानी को भी जले हुए स्थानों पर लगा सकते हैं।

(३) पानी में डूबना :-- पानी में डूबने से श्वास रुक जाता है और श्वास के मार्ग से फेफड़ों में और अन्न के मार्ग से पेट में पानी भर जाता है। अत सबसे पहले पानी में डूबे हुए व्यक्ति को निकालकर, पैर पकड़कर उलटा करके, मुख और नाक से पानी निकलने देवे। फिर औंधा लेटकर तथा पेट और छाती के मध्यवर्ती भाग पर छोटा निकाया आदि रखकर, पीठ की ओर से हल्का दबाव डालने से भी पेट और छाती में भरा हुआ पानी निकल जाता है। चूना और नौसादर तथा ना चाहिए। इससे रुकी हुई सास फिर चलने लगती है।

डूबे हुए व्यक्ति में कृत्रिम श्वास-प्रश्वास की क्रिया करानी ज़रूरी होती है। रोगी को चित लिटाकर उसकी पीठ के नीचे तकिया दखँकर छाती का निचला भाग ऊंचा कर दे, फिर कुहनी और कलाई के बीचे के भाग में पकड़ कर दोनों हाथों को झटके के साथ ऊपर उठावे और फिर तत्काल ही उन्हे कोहनी पर मोड़ते हुए छाती पर मग्नवनी के थाथ दंत्रावं किर हाथों को ऊपर लेकर फिर दबा दे। इस दौरान बार बार करते हुए १५-२० मिनट तक करना चाहिए। कृत्रिम श्वास-प्रश्वास कराने की अन्य भी विधिया है।

रोगी को थोड़ी ब्राडी या मद्द पिलावे। इससे शरीर गर्म होकर हृदय की घड़कन मद हो तो ये उपाय सफल होते हैं।

(४) विष खा लेना :-- धूल से अन्न पान में ग्रथवा जानवृभव विष खा लिया जाता है अलग-प्रलग विष में ग्रलग-अलग लक्षण होते हैं। इन लक्षणों को देखकर विष की पहिचान हो जाती है। सभी प्रकार के विषों में प्राथमिक रूप से उल्टी कराकर आभाशय में पहुंचा ह्यावा विष निकाल देना चाहिए। इसके लिए १ छटांक नमक, पानी में घोलकर रोगी को पिला देवे। इससे उल्टी हो जाती है।

(५) संखिया का विषयः—इसके खाने से थोड़ी ही देर बाद चक्कर, यकान, जी मिचलना और बाद में जलन, प्यास, खून मिले वमन, पेट में तेज दर्द और कुथन के साथ खून मिले हुए दस्ते (ग्रतीसार) होते हैं, जो बाद में केवल स्वच्छ पानी जैसे होने लगते हैं, जैसे हैजे में होते हैं, पेशाव की थंडी में जलन और पीड़ा, पेशाव कम आना, नाड़ी तेज, ठण्डा पसीना और बदन ढीला होना—ये लक्षण होते हैं। अन्त में तन्द्रा, वेहोशी, आक्षेप होकर मृत्यु हो जाती है।

उपचार — (१) वमन करावे। (२) शीघ्र ही दूध और जल पिलाकर आमाशय धुलावे। (३) अड़े की सफेदी और धी मिलाकर पिलावें। (४) बन चौलाई की जड़ का रस २ तोला प्रति २-३ घण्टे बाद देवे। (५) साठी चावल का भात शक्कर मिलाकर रोज खिलावे।

(२) बछनाभ खाने से—मुह, ओठ, जीभ, आदि में झन-झनाहट जलन और सुन्नता, अधिक लार गिरना, उल्टी, पेट में दर्द, सारे बदन में झनझनाहट, कपकपी और आक्षेप, श्वास रुकना आदि लक्षण होते हैं।

उपचार — (१) वमन करावे। (२) सेवा नमक, हल्दी, शहद और धी मिलाकर २ तोला, मात्रा में ४-५ बार देवे।

(३) कुचला का विष खान से—मुह में कड़वा स्वाद होना, गले और बदन की पेशियों में खिचाव, शरीर का पीछे की और मुड़ना या भीतर या बगल में मुड़ना, आँखे बाहर उभर आना, पुतलियों का फैल जाना, जबड़ा भीच जाना और श्वास रुक कर मृत्यु होती है। धनुवति के लक्षण इससे मिलते हैं।

उपचार — (१) वमन करावे (२) दूध में धी पिलाकर पलावे।

(४) धूतूरा खाने से—मुह, गला, और आमाशय में तेज जलन, गला सूखना, प्यास, वॉलना रुक जाना, मुख व आँखें लाल होना, चमड़ी खुश्क होना, पुतलियों का फैलना, पेशियों का ढीला होना, धीरे धीरे कुछ भी बकना, कपड़ों को नोचना और अगुलियों से तार खीचने जैसे चेष्टा करना, अन्त में वेहोशी होकर मृत्यु हो जाती है।

उपचार — वमन करावें, घृतपान, दुग्धपान करावें ।

चागेरी के ताजे पत्तों का रस २ तोला ४-५ बार पिलावें ।

५-अफीम खाने से—पहले उत्तेजना की दशा होती है । फिर थकान होकर तन्द्रा की अवस्था आती है । इसमें मुँह और होठों पर नोलिमा, आखों की पुतलिया सिकुड़ जाना-लक्षण होते हैं । फिर वेहोशी हो जाती है जबड़ा नीचे लटक जाता है और मुह खुल जाता है । नोलिका बढ़ जाती है । पुतलिया बहुत सिकुड़ जाती हैं । अन्त में श्वास रुककर मृत्यु हो जाती है ।

उपचार — (१) वमन करावे या आमाशय धुलावे ।

(२) सुहागा धी में मिलाकर चटावे ।

(३) हींग डालकर पानी पिलाकर वमन करावे । आवे से १ माशा तक हींग खिलाने से अफीम का विष उत्तर जाता है ।

६-जमालगोट का विष खाने से—पेट में जलन खून के दस्त, पेट में एंठन और पिण्डिलियों में दर्द होना—ये लक्षण होते हैं ।

उपचार — (१) जी का पानी और अण्डे की सफेदी मिलाकर पिलावे ।

(२) कपूर का जल पिलावे ।

७-तम्डाक् खाने से—जी मिचलाना, उल्टो, बैचेनी, हृदय को धड़कन बढ़ना, चक्कर आना और वेहोशी के लक्षण होते हैं ।

उपचार — (१) नमक का पानी पिलाकर वमन करावे ।

(२) शक्कर या ग्लुकोज, पानी में घोलकर पिलावे ।

८-भाँग, गांजा और चरस के सबन से—पहले तो उत्तेजना आती है वरोगी हसता, गाता चिल्हाता है, फिर आख की पुतलिया फैल जाती है । श्वास रुककर मृत्यु हो जाती है ।

उपचार — (१) नमक को पानी में मिलाकर वमन करावे । (२) अमरुद की पत्ती पीसकर उसका पानी बार-बार पिलावें ।

(३) खट्टी चीजे, छाछ पिलावें ।

* ५★ विष्वले भीव जन्तु स काट लना —

[१] **साप काटना** — साप काटने से दश वाले स्थान पर पीड़ा, सूजन, जी मिचलाना, तन्द्रा, निंद्रा, पेशियों में जकड़ा-हट, लार बहना और स्वर रुकना, लक्षण होते हैं। कुछ सॉपों के विष से धमनियों में रक्त जम जाता है। इवास रुककर मृत्यु हो जाती है।

उपचार :— [१] साप काटने के तुरन्त बाद काटे हुए स्थान के कुछ ऊपर वाले हिस्से में रस्सी से कसकर वाध देवे, जिससे विष का फैलाव सारे शरीर में नहीं होने पावे।

[२] दश-स्थान पर पेशाव कर देवे।

[३] दंश-स्थान पर चीरा देवे और रक्त वहने देवें।

[४] काटे हुए ब्रण पर पोटाश परमेंगनेट का गाढ़ा घोल बनाकर लगावे और उससे धोवे।

[५] ब्रण पर तम्बाकू या हुक्के का गुल लगाना चाहिए।

[६] फिटकरी, पानी में घोलकर पिलावे।

[७] सुहागा पानी में घोलकर पिलावे और उससे धाव धोवे।

बिच्छक का काटना — इसमें आग से जलने के समान तेज जलन और पीड़ा होती है।

उपचार — (१) जयपाल के बीज को घिसकर दश स्थान पर लगावे।

(२) निर्मली के बीज को घिसकर दश स्थान पर लगावे।

(३) चुना और नौसादर मिलाकर दश स्थान पर लगावे।

(४) दंश स्थान पर थोड़ा पोटशियम परमेंगनेट का चूर्ण रख उस पर नीट्रो का रस निचोड़े, इससे विष उतारता है।

(५) प्याज पीसकर गाढ़ा लेप दश स्थान पर करे।

(६) पलाश (ढाक) के बीज पीसकर लेप करे।

- (७) गरमजल में नमक धोलकर दश स्थान पर मर
- (८) फिटकरी को जल में मिलाकर लेप करे ।
- (९) नीम के पत्तों का रस पिलवें ।
- (१०) सिरके में कपूर मिलाकर लगावे ।

(३) पागल्ज कुदले का काट

- (१) एक वर्ष तक तांबे के बर्तन में ग्रीटाया हूँगा ।
- (२) लहसुन अधिक मात्रा से खावे ।
- (३) धी और काली मिर्च मिलाकर खावे ।
- (४) मकोय का क्वाथ या रस पिलावे ।
- (५) घाव पर प्याज का ताजा रस लगावे । और प्यरस पिलावे ।

(४) बर्द का काटना — काटे का पर ठन्डे पानी की धारा छोड़े, सिरके में शहद मिलाकर लागावे सि. मे कपूर मिलाकर लगावे । सोठ, काली मिर्च, सेवानमक और काल नमक पान के रस में पीसकर लगावे, स्पिरिट मले ।

(५) मधु मकरबी का काटना —

- (१) काली बास्त्री की मिट्टी को गोमूत्र में पीसकर लेप करे ।
- (२) सिरके में कपूर मिलाकर लगावे ।
- (३) दश पर लोहा घिसना चाहिए ।
- (४) दश पर काली तुलसी की जड़ पीसकर लगावे ।
- (५) सिरके में शहद मिलाकर लगावे ।

ख स्माप्त ॥



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

[creator of
hinduism
server]



COLLECTION OF VARIOUS
→ HINDUISM SCRIPTURES
→ HINDU COMICS
→ AYURVEDA
→ MAGZINES

FIND ALL AT [HTTPS://DSC.GG/DHARMA](https://dsc.gg/dharma)

Made with



By

Avinash/Shashi

[creator of
hinduism
server]

